Chapter-3

तृतीय अध्याय

प्रमुख कवियों का जीवन और कृतीत्व

संत ज्ञानीजी, नरसिंह महेता, भायाराम, संत कवि नाथाजी,
संत निर्वाण साहब, भक्त कवयित्री प्रेमाबाई, संत दादू दयाल,
भक्त कवयित्री अन्नपूर्णा, संत तेजानंद स्वामी, बाबा लोचन स्वामी,
जीवणदास (राम-कबीर सम्प्रदाय), अखा, भक्त कवयित्री चन्द्रावती,
अनिसा रोशन, संत चेतन स्वामी, लालदास, भेकणदादा, जीवणदास,
प्रीतमदास, राजे भगत, रत्नो भावसार, भक्त कवि गुलाबदास,
रवि साहब, निरांत, गवरी बाई, कुबेरदास - करूणासागर, अनवनखान,
निर्मलदासजी, वस्तो विश्वम्भर, भक्त कवि दयाराम, गिरधर,
देवा साहब, हरजीवनदास, छोटम, संत कंवलदास, संतराम महाराज,
संत महात्म्यराम, अर्जुन

जिस काव्य रूप के उद्‌भव और विकास की विस्तृत चर्चा हम पिछले पृष्ठों में कर चुके हैं उसके प्रयोक्ताओं का और उनके कृतित्व का संक्षिप्त आलोचनात्मक अध्ययन हम प्रस्तुत करेंगे । प्रस्तुत अध्याय में छोटे बड़े कुल मिलाकर 38 कवियों का परिचय दिया गया है । परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि इनके अतिरिक्त अन्य कवि नहीं होंगे । गुजरात के हस्तलिखित ग्रन्थ भंडारों में जो विपुल हस्तलिखित सामग्री सुरक्षित है इसकी सम्यक् छानबीन करने की भरसक आवश्यकता है । **Descriptive cataloge of manuscript available in the Oriental Institution of Gujarat** जैसा ग्रन्थ अवश्य उपलब्ध होना चाहिये । जिसके आधार पर शोधार्थी अपना शोधकार्य सुष्ठ रूप से परिचालित कर सके । ऐसा कोई ग्रन्थ उपलब्ध न होने के कारण हम चाहने पर भी गुजरात के सभी साखीकारों के बारे में लिख नहीं पा रहे हैं । हालांकि हमने गुजरात के दूरदराज के गाँवों के कुछ स्थानों में सुरक्षित हस्तलिखित पोथियों में से अपने काम की सामग्री ढूंढ निकालने का प्रयास अवश्य किया है । अत: प्रस्तुत अध्याय में निम्नलिखित कवियों की प्रकाशित और अप्रकाशित रचनाओं का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न किया जा रहा है ।

इन कवियों में कुछ कवि जैसे अखा, प्रीतम आदि ऐसे हैं जो गुजरात के समर्थ कवि है इनके बारे में विस्तृत शोध कार्य हो चुका है दूसरे प्रकार के कवि वे हैं जैसे निर्वाण साहब की परम्परा गुजरात के इस्लामी संतों की परम्परा, अन्नपूर्णा, अनिशा आदि कवयित्रियाँ जिनकी ओर न तो विद्वानों का ध्यान ही गया है और न ही शोधार्थियों का । हमने प्रथम प्रकार के कवियों के बारे में लिखते समय इस बात का अवश्य ध्यान रखा है कि पिष्टप्रेशन न हो अत: ऐसे कवियों का परिचय अत्यन्त संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है ।

दूसरे वर्ग के कवियों में ऐसे कुछ कवि हैं जिनकी रचनायें अप्रकाशित है तथा जिन पर किसी प्रकार का अध्ययन नहीं किया गया है । उन कवियों को कुछ अपेक्षित विस्तार से रखने का प्रयत्न किया है ।

संत ज्ञानीजी (ई.स. 1395 से 1503)

जैसलमेर के भट्टी कुल में ज्ञानीजी का जन्म (ई.स. 1395 में) हुआ था। ये भट्टी राजा मोती सिंह के राजकुमार थे। ज्ञानीजी का असली नाम चतुर सिंह था। ज्योतिषी ने इनके माथे में धर्मतिलक देखा था। "राम" शब्द का उच्चारण इन्होंने अति अल्प आयु में ही किया था। अधिकांश समय ये राम मंदिर में ही व्यतीत करते थे। राजकुमार होने पर भी दिन का अधिकांश समय भजन ध्यान आदि धार्मिक कार्यों में गुजारते थे। बताया जाता है कि वर्ष की ग्यारह वर्ष की अल्प आयु में ही चतुर्वेद का फारसी भाषा में अनुवाद करके लोगों को समझाने में दक्ष हो गये थे।[1]

ई.स. 1411 में इनका विवाह राजकन्या गंगाकुंवरबा के साथ हुआ परन्तु विवाह मंडप से ही ये भाग गये। वहाँ से ये संत खोजीजी के पास गये। खोजी जी के साथ स्वामी रामानन्द के पास अयोध्या पहुँचे। कहा जाता है कि रामानन्दजी ने ही इनको "ज्ञानी" नाम से अभिहित किया। खोजी जी और स्वामी जी के मार्ग दर्शन से राजकुमार चतुर सिंह नर्मदा के दक्षिण तट पर गए। खोजीजी और स्वामीजी के आग्रह से ज्ञानीजी ने कबीर साहब का शिष्यत्व ग्रहण किया। दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् कबीरवड के पास नर्मदा के तट पर मणिपुर (सांजागाँव) में रहने लगे।

उन दिनों मणिपुर नरेश ने एक संत मेले का आयोजन किया था। उस मेले में जयपुर और जैसलमेर के राजपरिवार आये थे। इनके साथ इनकी (ज्ञानीजी की) पत्नी गंगाकुंवर भी थी। गंगाकुंवर ज्ञानीजी के साथ रहना चाहती थी। परन्तु ज्ञानीजी गृहस्थाश्रम त्याग चुके थे। फिर भी समझाने पर गंगाकुवर इनके साथ रहकर जनसेवा करने लगी।[2]

---

(1) रामकबीर सम्प्रदाय - (पृ0 38)

(2) रामकबीर सम्प्रदाय - (पृ0)

उस समय गुजरात एक धार्मिक संघर्ष से गुजर रहा था । शैव, शाक्त, वैष्णव और जैनों के बीच में धर्म के नाम पर प्रायः झगड़े होते रहते थे । कहा जाता है कि मणिपुर के मूल निवासी तत्वाजी और जीवाजी काशी भ्रमण के समय वे स्वामी रामानंदजी से मिले और गुजरात की तत्कालीन धार्मिक परिस्थिति से उन्हें अवगत कराया । तत्पश्चात् रामानंदजी ने कबीरजी को गुजरात जाने का आदेश दिया । कबीरजी ने अपने शिष्य ज्ञानीजी से मिलकर एक "सर्व धर्म सभा" का आयोजन किया । यह सम्मेलन पौष महीने के एकादशी से लेकर पूर्णिमा तक के पाँच दिन लगा था ।

इस सम्मेलन में सिद्धपुर से रमाशंकर शास्त्री तथा नीलकंठ दास, सोमनाथ से त्रिलोचन, मम्मा देवी (बम्बई से) श्री हाजी मलंग, कच्छ से योगिनी मैया, गीरनार से मोहनपुरी, सौराष्ट्र के शिवमार्गी पंडित शिवशंकर तथा शक्तिमार्गी त्रिपुराप्रसाद के पश्चात् बंगाल के कालीप्रसाद, सतारा के नसिंहाचार्य तथा विजयनगर के विद्यावरिधि कल्हण आदि बड़े-बड़े भक्त और विद्वान आये थे । पूर्णिमा के दिन अर्बुदागिरि से अंबाप्रसाद, जैनाचार्य कल्याणसुरी, महासती भद्रादेवी तथा दांता नरेश भी आये थे । इसके पश्चात् निर्मोही, निर्वाण तथा दिगम्बर अखाड़े के साधुओं ने इस सम्मेलन में भाग लिया था । ज्ञानीजी के समय से पौष शुद एकादशी से महाशिवरात्री तक इस स्थान में मेला होता था । कुछ वर्ष तक चलने के पश्चात् (.) कर संबंधी कुछ कारणों से इस मेले को बन्द कर देना पड़ा ।[1]

संतों के जीवन में प्रायः कुछ न कुछ घटनायें होती रहती है जो उनको चिरंजीविता प्रदान करती है । इस प्रकार की कुछ घटनाओं को हम इनके जीवन में भी देखते हैं । इनकी दया से एक लोहाणे भक्त को पुत्र प्राप्ति हुई । इस

---

(1) राम कबीर ~~भ~~ परम्परा - (पृ० 110)

कारण भक्त ने गुरू को एक सोने की पालकी भेंट की परन्तु उसे ज्ञानीजी ने राज्य-कोश में दान कर दिया । प्रतिदिन उनके पास रोगी और दुःखी प्रजा रोग निवारण हेतु आती थी और मनवांछित फल पाकर लौट जाती थी । शिनोर के एक लकवे के रोगी को ज्ञानीजी ने स्वस्थ्य बना दिया और वह उनका शिष्य बन गया । गोपालदास नामक एक महान विद्वान के साथ तर्क करते समय उनके समग्र ग्रन्थों को मात्र एक तुलसी पत्र से भी हल्का प्रमाणित कर दिया । जिस पर "राम कबीर" लिखा था । यह भी बताया जाता है कि एक टूट हुए नीम के वृक्ष को जोड़कर जीवित कर दिया जो आज भी खड़ा है । इस प्रकार के अनेक चमत्कार उनके जीवन से जुड़े हैं ।

ज्ञानीजी ने जीवन्त समाधी लेने का निश्चय किया और ई.स. 1502 में "राम-कबीर" शब्दोच्चारण के साथ जीवन्त समाधि भी ले ली । इस प्रकार गुजरात का एक महान संत ज्ञान को आज अश्रु धारा बहाकर सदा के लिए इस धाम को छोड़कर चला गया ।

ज्ञानी जी की रचनायें :

ज्ञानीजी अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे । हिन्दी, फारसी, गुजराती, राजस्थानी, संस्कृत आदि भाषाओं का असर उनकी रचनाओं में देखा जा सकता है ।[1] एक विद्वान संत होने के कारण वेदों का अध्ययन भी उन्होंने किया था तथा लोकप्रचार हेतु वेदों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद किया था । इनकी सात रचनायें उपलब्ध हैं जो कबीर परम्परा में लिखी गई है । हमारे ज्ञानतः उनकी केवल दो रचनायें ही प्रकाशित हैं । उनकी प्रकाशित और अप्रकाशित रचनायें संक्षिप्त विवरण के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है :-

---

(1) राम कबीर सम्प्रदाय - (पृ0 60)

॥अ॥ <u>प्रकाशित रचनाएँ</u> :

॥1॥ <u>ज्ञान दीपक चन्द्रायन</u> -

यह ग्रन्थ प्रकाशित है । इस ग्रन्थ में ज्ञानीजी ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि भक्त और भगवान एक है । दोनों ने स्पष्ट किया है । सतयुग में सत्य का, त्रेता में तप का, द्वापर में पूजा का, तथा कलियुग में नाम का ही आधार है । संसार की लय और विलय का वर्णन ज्ञानीजी ने स्पष्ट रूप से इस ग्रन्थ में किया है ।

ज्ञानीजी की "ब्रह्मस्तुति" तथा "ज्ञान पाति" हस्तलिखित ग्रन्थों का उल्लेख काशी नागरी प्रचारिणी सभा के त्रिवार्षिक रिपोर्ट ॥1938 - 40 तथा 1931 - 38॥ में किया गया है ।

॥आ॥ <u>अप्रकाशित रचनाएँ</u> :

॥1॥ <u>साखी ग्रन्थ</u> -

इस ग्रन्थ में पहले भाग में कबीरजी की साखियाँ हैं और तत्-पश्चात् लगभग 699 साखियाँ ज्ञानीजी की हैं । इनकी साखियाँ लगभग 40 अंगों में विभाजित हैं ।

ज्ञानीजी ने कबीर के कर्मकांड विरोधी विचार धारा को स्वीकार किया था परन्तु इनकी वाणी में विरोध की प्रखरता अधिक नहीं है । इन्होंने स्पष्ट किया है कि मेरे गुरु कबीर ने मुझे शिक्षा दी है कि अन्य धर्म सब "आचार धर्म" हो गये हैं केवल रामनाम सत्य है । इस प्रकार केवल शिक्षा उपदेश और गुरु - इस का गुणगान ही इनकी साखियों का मूल तत्व है ।

(2) **शब्द पारखी** -

इस ग्रन्थ का दूसरा नाम "ज्ञान-बत्तिसी" है । इनमें ज्ञानीजी ने 32 छप्या लिखी है । गुजराती साहित्य के कवि मांडण ने जो "प्रबोध बत्रिसी" लिखी है । वह ज्ञानीजी की "ज्ञान - बत्तिसी" की परम्परा में लिखी गई है और उन पर ज्ञानी के वाणी का स्पष्ट प्रभाव है ।

इस रचना में गुरू, ब्रम्ह, मुनि, सन्यासी, पंडित, ब्राम्हण, जैन, हिन्दू, मुसलमान, काजी शेख, सैयद, गृहस्थ, वैरागी तथा स्वामी-सेवक आदि के लक्षणों की चर्चा की गई है ।

(3) **रामसार ग्रंथ** -

यह ग्रंथ अप्रकाशित है तथा हस्तलिखित रूप में सुरक्षित है । इसमें राम नाम की महिमा का वर्णन है । ग्रंथ शिव पार्वती संवाद के रूप में लिखा गया है । राम नाम पर श्रद्धा रखकर स्थिर मन से राम के नामस्मरण का जो उपदेश कबीरजी ने ज्ञानीजी को दिया था, प्रस्तुत ग्रन्थ में इसी को महत्व दिया गया है ।

(4) **नाम महिमा** -

यह एक दीर्घ काव्य है इसमें नाम महिमा का निरूपण है । जिन भक्तों का नामजप के कारण हुआ है इनका वर्णन इस ग्रन्थ में किया गया है । जैसे संत कबीर, रैदास, नामदेव, धना, पीपा आदि का उल्लेख है ।

(5) **कबीर ज्ञानी संवाद** -

इस ग्रन्थ के अन्तर्गत कबीर ज्ञानी संवाद के रूप में तत्वज्ञान विषयक चर्चाएं की गई हैं जो कि प्रश्नोत्तर के रूप में है । ज्ञानी जी के प्रश्नों के उत्तर में कबीरजी ने आत्मबोध के उपदेश दिए है । इस ग्रन्थ में ब्रम्ह, अलख निरंजन तथा पाँच तत्व स्वर्ग आदि समझाया गया है ।

॥6॥ पद -

ज्ञानी जी द्वारा रचित कुछ पद भी उपलब्ध है ।

ज्ञानी जी ॥सन् 1395 से 1500॥ ॥साखी ग्रंथ है अंगबद्ध रूप में॥

क्रम सं0	अंगों के नाम		साखियों की संख्या
1	गुरूदेव कौ अंग	... ...	154
2	संत कौ अंग	... ...	83
3	सूमरण कौ अंग	... ...	57
4	नाम महातम कौ अंग	... ...	31
5	पीउपरचा कौ अंग	... ...	23
6	उनदेस कौ अंग	... ...	5
7	अवर्ण कौ अंग	... ...	13
8	संत नीरवाणी कौ अंग	... ...	6
9	नीकलंक कौ अंग	... ...	4
10	दुर्लभ कौ अंग	... ...	12
11	सीरौमात्र कौ अंग	... ...	20
12	समरथाई कौ अंग	... ...	20
13	चात्यामणी कौ अंग	... ...	2
14	सहैज कौ अंग	... ...	6
15	हैत कौ अंग	... ...	6
16	कामधेन कौ अंग	... ...	18
17	भ्रंग कौ अंग	... ...	18
18	भेदी कौ अंग	... ...	16
19	बाजीगर कौ अंग	... ...	10
20	माया कौ अंग	... ...	30
21	राजस कौ अंग	... ...	8
22	तामसी कौ अंग	... ...	8

HANSA MEHTA LIBRARY
M. S. University of Baroda

क्रम सं0	अंगों के नाम				साखियों की संख्या
23	स्वातीक कौ अंग	...	...	...	7
24	टीका अंग	...	...	...	5
25	अनहद कौ अंग	...	...	...	35
26	ब्रीहैं कौ अंग	...	...	...	22
27	लाग कौ अंग (लगन कौ अंग)		...	...	8
28	प्रीत कौ अंग	...	...	...	6
29	प्रमार्थ कौ अंग	...	...	...	5
30	स्वार्थ कौ अंग	...	...	...	7
31	विभीचारणी कौ अंग	...	...	...	5
32	पतिब्रता कौ अंग	...	...	...	4
33	कठोर कौ अंग	...	...	...	15
34	प्रभोध कौ अंग	...	...	...	11
35	वीनती कौ अंग	...	...	...	15
36	क्रीपा कौ अंग	...	...	...	16
37	भेट कौ अंग	...	...	...	5
38	चतामण कौ अंग	...	...	...	17
39	काल कौ अंग	...	...	...	18

उपरोक्त अंगों में विभक्त 800 के आस-पास अप्रकाशित साखियाँ उपलब्ध हैं। जिनमें से 150 के करीब साखियाँ गुजराती में हैं तथा 650 के करीब साखियाँ हिन्दी में हैं।

नरसिंह महेता : (ई.सं. 1424 - ई.सं. 1520 तक)

नरसिंह का जन्म जूनागढ़ के तलाजा गाँव में हुआ था । इनका जीवन-काल ई.स. 1424 से 1520 तक माना जाता है । इनके पिता कृष्णदास और माता दयाकुँवर थी । माता पिता के देहान्त हो जाने पर अति अल्पआयु में ही ये भगवत भजन में लग गए, विवाह के पश्चात् भी इनका सांसारिक धर्म में मन नहीं लगा । एक पुत्र और पुत्री को छोड़कर कृष्णभक्ति में मस्त हो गए ।

नरसिंह महेता को गुजरात का वाल्मीकि अर्थात् आदिकवि माना जाता है । इनकी छोटी-बड़ी 27 रचनायें मिलती हैं ।[1] इनकी रचनाओं की गति सगुण और निर्गुण दोनों क्षेत्रों में हैं । इन्होंने श्रीकृष्ण की श्रृंगार लिलाओं का वर्णन करने के साथ-साथ वेदान्तोपनिषदों की आर्यवाणी प्रदान की है । प्रारम्भ में शिव एवं श्रीकृष्ण के भक्त थे । इसके उपरान्त वे शुद्ध परम वेदान्ती एवं ज्ञानी बन गये ।[2] नरसिंह ने कृष्ण को सच्चिदानंद, रसरूप सर्वविशुद्ध धर्माश्रयी परब्रम्ह - पूर्णब्रह्म माना है ।[3] कवि ने संसार को क्षणिक कहकर श्रीहरि को भजने का जीव को उपदेश दिया है तथा संसार के अहंता - ममतात्मक क्षणीक संबंधों को त्यागकर जीव को हरिचरण की शरण में जाने का बोध दिया है । इनकी रचनाएँ मारवाड़ी, ब्रजभाषा तथा स्वभाषा

---

(1) हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में गुजरात का योगदान (पृ0 261)

(2) हिन्दी भाषा और सा. केविकास में गुजरात का योगदान (पृ0 261)

(3) हिन्दी भाषा और सा. के विकास में गुजरात का योगदान (पृ0 263)

गुजराती में उपलब्ध है । "रास सहस्त्रपदी" नरसिंह महेता की अन्यतम कृति हैं । यह काव्य कृष्ण की आलौकिक रासलीला को छन्द में बांधने का अभूतपूर्व प्रयत्न है । प्रस्तुत काव्य की भाषा पूर्णतः गुजराती है परन्तु इसके कुछ एक पद ब्रज-भाषा में लिखे गये हैं । कहीं कहीं गुजराती का प्रभाव परिलक्षित होता है । परन्तु यह प्रभावऊपरी सतह पर है । यहाँ उन्होंने साखियों का प्रयोग सुन्दर ढंग से किया है । पद और चाल के अन्त में साखी लिखकर उचना की महत्ता को बढ़ा दिया है -

साखी -

प्रेम प्रति हरि जानी के ‌(जीन के)
आये उनके पास ।
मुदित भई या भामिनी
गुण गावे नरसैयो दास ।।

राग सोमरी - साखी

कुंज भवन (भुवन) खोजती प्रति रे
खोजत मदन गोपाल ।
प्राणनाथ पावे नहीं तातें
व्याकुल भई ब्रजबाला ।।

इनकी भक्ति पद्धति पर जहाँ भागवत और गीत गोविन्द का प्रभाव है वहाँ ज्ञान वैराग परक रचनाओं में कबीर का प्रभाव स्पष्ट है । नरसिंह और दयाराम दोनों की उपासना सगुण परक है ।

नरसिंह की गुजराती रचनाओं में हारमाला, गोविन्द गमन, श्यामलदास के विवाह, सूरत संग्राम, सुदामा यति, श्रृंगार माला आदि प्रमुख है ।

इनके कुछ हिन्दी पद भी उपलब्ध हैं जिनकी प्रमाणिकता संदिग्ध है । इनके द्वारा रचित "रास पंचाध्यायी" के पदों के अन्तर्गत जो ब्रजसाखियाँ उपलब्ध हैं उनके आधार पर गुजरात में काव्य भाषा के रूप में ब्रज के प्रचार-प्रसार की चर्चा अन्यत्र की गई है । साखियाँ काव्य एवं शिल्प की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण होने के कारण आलोच्य कवि के रूप में नरसिंह को लिया गया है ।

भाभाराम : ‖1449 ई. से 1523 ई. तक‖

भाभाराम के पिता का नाम केशवदास और माता का नाम विमलादेवी था । इनका जन्म खेड़ा जिला के "वसो" गाँव में हुआ था । कहा जाता है कि इनके जन्म के समय आकाश से चन्दनों की वर्षा हुई थी ।[1] माता-पिता के लाड़-प्यार से भाभाराम दिन दुगुनी और रात चौगुनी बढ़ने लगे । भाभाराम का व्यक्तित्व आकर्षक था । सत्य, ब्रम्हचर्य, अहिंसा, संतोष इत्यादि गुणों के कारण इनका सर्वत्र सम्मान होता था । इनका विवाह एक उत्तम कुल की संस्कारी युवती "रोहिणी" से हुआ । माता-पिता की मृत्यु होने से भाभाराम को संसार के आसार लगने लगा तथा वे तिर्थाटन में निकल गए ।

तिर्थयात्रा के समय इनका समागम रामानन्द स्वामी, धना भगत, पीपा भगत, रैदास, भवानंद, हरिदास जैसे महान संतों से हुआ । इन्होंने इनके साथ सत्संग किया और परमानंदित हुए । यहाँ तक कि इन्होंने संत कबीर के साथ भी समागम किया । संतों के समागम से भाभाराम तृप्त हुए और संसार त्याग करने का निश्चय कर लिया । हरि स्मरण करते हुए इतने एकाग्र चित्त हो जाते थे कि जैसे हरिमय हो गए हों । बताया जाता है कि भाभाराम के साथ चार सिद्ध पुरूषों का प्रत्यक्ष एवं बार-बार मिलन हुआ था । इनसे मिलकर भाभाराम की इस संसार से आसक्ति ~~ख्र~~ पूर्ण रूप से दूर हुई । इनके नाम हैं :-

‖1‖ अडवंगनाथ जो उत्तरखंड के गिरी कन्दराओं में अधिकांश समय ध्यान-मग्न रहते थे । ये भाभाराम की सहायता करते थे ।

‖2‖ जान्हवीदास : योगी सोहंमनाथ ही सिद्ध पुरूष जान्हवी दास के नाम से जाने जाते हैं । दुनिया कीभलाई के लिए अनेक

‖1‖ संत भाभाराम - ‖पृ0 17‖

बार जन्म ग्रहण किए । यही सिद्ध पुरुष अडवंगनाथ के साथ भाभाराम के पास आये ।[1]

(3) योगी सतानंदजी भी एक सिद्ध पुरुष थे । इनकी अद्भुत क्षमता थी । जब कभी भी इच्छा होती भक्त के सहायतार्थ अन्तर्ध्यान हो जाते थे । ये भी भाभाराम से मिलने इनके पास आये ।[2]

(4) योगी रसिकनाथ भी उत्तरखंड की गिरी कन्दराओं में ध्यान मग्न रहते थे । जनता के दुःख कष्ट दूर करने के लिए कभी-कभी उतरते थे । भाभाराम को शान्ति प्रदान करने के लिए ये सिद्ध पुरुष भी उनके स्थल में आए । ज्ञान और भक्ति की वाणी सुनाकर भाभाराम को शान्त किया और चले गये । भाभाराम को उनके पूर्वजन्म की कथा सुनाई और एक योग भ्रष्ट योगी होने की बात कही ।[3]

भाभाराम ने अपनी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा तथा ज्ञानोपदेश देकर अनेक दुष्ट लोगों का उद्धार किया । इन्होंने सुबाहु नामक जादूगर का, शाहूजी नामक वणजारे का तथा राहुल नामक वाघरी का उद्धार किया । रूदनाजी लुटेरा भी भाभाराम के सत्संग के समय उपस्थित होने के कारण उसका भी उद्धार हो गया तथा हृदय परिवर्तन हुआ । मोहिनी नामक गणिका का भी उद्धार भाभाराम के सतवचनों द्वारा हुआ ।[4]

----

(1) संत भाभाराम - (पृ0 139)
(2) संत भाभाराम - (पृ0 140)
(3) संत भाभाराम - (पृ0 142)
(4) संत भाभाराम - (पृ0 434)

संत भाभाराम के शिष्यों की संख्या बहुत बड़ी है। इनकी एक प्रधान शिष्या का नाम कीकी बाई था। इनका ससुराल नड़ियाद में था। परन्तु विधि के विधान ने इनको संत भाभाराम से मिला दिया तथा इनकी चरण वंदना करते-करते ये स्वयं एक दिन महान संत बन गई और अपने गुरू भाभाराम के वचनों का प्रचार-प्रसार करने लगी। इन्होंने भी अनेक पद और साखियों की रचना की है जो अध्यात्म भाव से पूर्ण है।

भक्त कवि मेधावती भी इनकी प्रधान शिष्या थी। जंगल में गाय चराते समय इन्होंने भाभाराम के मधुर सचनों का श्रवण किया और अध्यात्मभाव से विभोर होकर जिन भजनों, पदों और साखियों का गायत करती वह सराहनीय है।[1] बरसात के दिनों में जब वह जंगल नहीं जा सकती थी तब विरह भाव से गा उठती थी -

सजनी मोरे सदगुरू का विरहा, मोसे सहया न जावे
भाभाराम सदगुरू के चरणों में, मेधावती यश गावै ।।

संत मुक्तिराज भी भाभाराम के अनन्य भक्त थे। गंगासिंह, भोजराज भी इनके प्रिय भक्त थे।

बाबा लोचन स्वामी की प्रेरणा से भाभाराम भजन गाने लगे। भजन की प्रेमध्वनि पद के रूप में गुंजने लगी। भाभाराम ने अनेक भजन, पदों तथा साखियों की रचना की है। इनकी साखियाँ समाजोपयोगी तथा अध्यात्मभाव से परिपूर्ण है।

संत भाभाराम ने फुटकल साखियाँ लिखी हैं। इन्होंने साखियों की रचना ब्रजभाषा में की है। जिनकी संख्या 13 है। ये अप्रकाशित हैं।

---

[1] भाभाराम - पृ0 604

संत कवि नाथाजी : ॥1455 ई. के आसपास से 1533 तक॥

कहा जाता है नाथाजी एक बहुत बड़े लुटेरे थें । इनका नाम सुनते ही लोग डर से कांपने लग जाते थे । गुजरात के कानम परगणा के ठाकरडा, कोली कुल में इनका जन्म हुआ था । कुछ लोगों का यह भी कहना है कि नाथाजी भील किरतार थे । इनके पूर्वज लुटेरे थे । अत: नाथाजी अपने पूर्वजों के धंधे में रत थे । ये बड़े संगदिल और कठोर थे । इनके हृदय में भक्ति की ज्योत जगाने का कार्य संत इमामशाह ने किया । येइमामशाह पीराणापंथ के स्थापक थे । गीता उपनिषद तथा अथर्ववेद के भी ज्ञाता थे । अत: इन्होंने नाथाजी को इनके पूर्वजन्म के बारे में बताया और तीनों अवस्थाओं ॥जन्म, मृत्यु तथा पूर्वजन्म॥ का दर्शन कराया ।[1] संत इमामशाह हिन्दु, मुसलमान की एकता के मिशाल थे । नवाब उस्मान खान, नाथाजी के समय में नवाब थे । ॥ई.स. 1461॥

सदगुरू के वचनों से लुटेरे नाथाजी का हृदय परिवर्तन होने के कारण अपने सदगुरू के वचनों का प्रचार-प्रसार, समाज हितैषी कार्य सत्कार्य में अपने को समाहित किया । सदगुरू की विमलवाणी के द्वारा नाथाजी ने अनेक लोगों के हृदय में ब्रह्मज्योति जलायी ।

संत नाथाजी ने अनेक स्थलों का भ्रमण किया । गढ़ गिरनार पर जाकर दत्तात्रेयजी का दर्शन करके सौराष्ट्र भ्रमण को निकले । वहाँ से मारवाड़ तथा मेवाड़ होकर कोटा, बुंदेलखंड आदि स्थानों में गये । इसी प्रकार उज्जैन, मालवा, महाराष्ट्र तथा खानदेश जाकर गुरूवाणी का प्रचार किया । संत नाथाजी जहाँ भी जाते वहाँ किसी न किसी जीव को उपदेश देकर पाप मुक्त करते थे ।

॥1॥ संत कवि नाथाजी - ॥पृ0 25॥

पठान बुलंदखान एक बहुत बड़े फकीर थे । उन्होंने नाथाजी के साथ सत्संग किया और नाथाजी की प्रेरणा से ही संत सोहमनाथ, संत भाभाराम तथा संत निर्वाण साहब के साथ सत्संग तथा ज्ञान का आदान-प्रदान हुआ । इस प्रकार नाथाजी अनेक संतों के मेल मिलाप में सहायक हुए ।[1]

नाथाजी के समय में योगी पुरूषों का मंगल मिलन भी हुआ । सिद्ध अड़वंग-नाथ, योगी त्रिलोकनाथ, योगी ऋषभनाथ, योगी जान्हवीदास, योगी पदमनाथ, योगी रसिकनाथ, योगी निलाम्बरदास, योगी सतानंदजी, योगी ओच्छवदास, योगी विरागदास आदि महान तपेश्वरी संत आये और नाथाजी के साथ समागम करके आनन्द विभोर हो गये ।

संत नाथाजी एक मस्त भजनिक संत कवि थे । हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में अनेक पदों की रचना की । इनके प्रधान शिष्य गंगाजी उच्च कोटि के कवि थे इनकी रचनाओं से नाथाजी का चरित्र चित्रण पूर्णत: स्पष्ट होता है । शायद वंशीलाल द्वारा रचित लावणी से भी नाथाजी का जीवन चरित्र स्पष्ट होता है ।[2]

नाथाजी की रचित 13 महत्त्वपूर्ण साखियाँ ही उपलब्ध हुई है । यह साखियाँ शुद्ध ब्रजभाषा में लिखी गई है । इनमें हिन्दू, मुसलमानों के भेदभाव का विरोध किया गया है । नाथाजी ने इस विषय पर अधिक महत्त्व दिया है कि अगर हृदय में ईश्वर प्राप्ति की प्रबल आशा या आकांक्षा हो तो एक सच्चे मार्गदर्शक, सदगुरू की अति आवश्यकता है जिनके मार्गदर्शन से साक्षात् भगवत स्वरूप का दर्शन होता है । अत: मुमुक्ष को एक सदगुरू के उपदेश की प्रयोजनिकता अधिक है । इनके जीवन पर दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट होता है कि नाथाजी ने साखियाँ आत्मानुभूति से ही लिखी है । उनकी साखियाँ भगवतबोध से भरी होने के साथ-साथ समाजोपयोगी भी हैं । इस्लाम के पीराणा परम्परा के होने के कारण इनकी भाषा को गुजरी भी कह सकते हैं ।

नाथाजी की उपलब्ध 13 साखियाँ प्रकाशित हैं ।

----

(1) संत नाथाजी - (पृ0 218)

(2) संत नाथाजी - (पृ0 275)

<u>संत निर्वाण साहेब</u> : ‡ई.स. 1421 से 1514‡

मुलतान में एक बनिये के घर में निर्वाण साहब का जन्म ई.स. 1481 में हुआ। इनके माता, पिता के कोई पुत्र न होने के कारण संत सेवा करके, उनके आशीर्वादों के फलस्वरूप इनका जन्म हुआ था। इनके बचपन का नाम "सोहम" था। 12 वर्ष की अवस्था में उनका परिचय एक सिद्ध पुरूष के साथ हुआ जिसके साथ हिमालय यात्रा करने के लिए निकल पड़े। वहाँ ज्ञान प्राप्त करने के बाद मोक्षधाम, काशी आये तथा एक अपुत्रब्राह्मण को आशीर्वाद देने के फलस्वरूप दूबारा उन्होंने अपना शरीर त्यागकर उसे ब्राह्मण के घर उसके पुत्र रूप में जन्म लिया। इस जन्म में उनका नाम "लक्ष्मीदास" पड़ा। यहाँ से भी 16 वर्ष की उम्र में माता-पिता को छोड़कर तिर्थ भ्रमण करते हुए मरूभूमि मारवाड़ के जापल गुरूद्वार पहुँचे। वहाँ सद्गुरू केशोदासजी के शिष्य बने।‡1‡

उस समय सूरत में नवाबों का राज्य था। वहाँ हाकेम हयातुखान नवाब बना बैठा था। उनके राज्य में साधुओं का बहुत अनादर होता था। नवाब के समय की राजकीय स्थिति का हृदयविदारक उल्लेख दुलाराम ने अपनी रचनाओं में किया है।" जो "सुरत ना संतों अने भक्त कवियों" के नाम से "फर्बस त्रैमासिक पु0 - 4 अंक ई. 1939" में निकला था।‡2‡ गुरूदेव केशोदासजी के आदेश से अनाचार के मिटाने के लिए लक्ष्मीदास ने उत्तर प्रदेश से गुजरात के लिए प्रस्थान किया। सर्वप्रथम ये पाटण पहुँचे।

निर्वाण साहब की शिष्य परम्परा बहुत लम्बी है। इनके शिष्यों में हिन्दु इस्लाम दोनों ही धर्म के लोग हैं। संत कवि साँई सौदात खाँ, मलिक गोपीनाथ संत कवि जंभाराम, ध्यानी संत आभाराम, भक्त कवयित्री अन्नपूर्णा आदि मुख्य भक्त शिष्यों ने निर्वाण साहब के धार्मिक विचारों को जनता में प्रचार करने का कार्य किया तथा अनेक भक्ति मूलक रचनायें की, जिनमें उनके द्वारा रचित महत्वपूर्ण साखियाँ हैं।

---

‡1‡ संत निर्वाण साहब - ‡पृ0 12‡

‡2‡ संत निर्वाण साहब - ‡पृ0 63‡

जिन महान संतों का मिलन निर्वाण साहब के साथ हुआ था उनमें कबीरदास जी, हजरत शाह आलम, पीर इमाम शाह, साध्वी मीराबाई, संत नामदेव, संत रैदास, संत पीपाजी, संत सेवाताई ‡रामानंद स्वामी के शिष्य‡ संत धनाजी आदि के नाम गिनाए जाते हैं ।

संत निर्वाण साहब एक भविष्य द्रष्टा थे । अपनी तिक्ष्ण एवं दूरदृष्टि के कारण इनके द्वारा की गई भविष्य वाणियाँ जब फलती थी तब इनके शिष्यगण भक्ति-भाव से गद गद होकर इनके नाम महिमा का प्रचार-प्रसार और तेजी से करना प्रारंभ कर देते थे । इस प्रकार गुजरात प्रदेश से होकर इतर प्रदेश जैसे मारवाड़, आदि प्रदेशों में इनकी ख्याति फैल गई । निर्वाण साहब अपने समय के अनेक राजा और महाराजाओं के राज्यकाल में सम्मान प्राप्त किए और धर्मोपदेश द्वारा प्रजा में भक्तिभाव का संचार किया ।

कृतित्व :

संत निर्वाण साहब ने विपुल संत वाणी की रचना की थी । इनकी वाणी का सार तत्व मानव उद्धार के प्रमुख आधार हैं । इनकी रचना के अन्तर्गत पद, भजन, झूलना, कुंडलियाँ, साखी आदि का स्थान मुख्य हैं । प्राय: इनकी छिट-पुट रचनायें ही उपलब्ध हैं । इनकी भाषा सरल तथा हृदयग्राह्य है । अपने उपदेशों को जनता के मध्य प्रचार करने के लिए उन्होंने सहज सरल भाषा का प्रयोग किया जिससे सामान्य जनता उनकी रचना का रसास्वादन कर सकें । अत: संत टकसाल की हिन्दी भाषा ही उनकी रचना का मूल आधार बना । गुरू की वन्दना, धर्मोपदेश, सामाजिक कुप्रथा, ऊँचनीच के भेदभाव का खण्डन आदि विषयों को इन्होंने अपनी साखी का मूल विषय बनाया ।

इनके द्वारा रचित छिटपुट 40 साखियाँ ही उपलब्ध हो सकी । जिनका उचित प्रयोग यथास्थान करने का प्रयास किया गया है ।

भक्त कवयित्री प्रेमाबाई : (ई० 1544 से 1556)

प्रेमाबाई का समय ई. 1544 से 1556 है। पाठण के शेवमल परमार के घर प्रेमाबाई का जन्म हुआ। युवावस्था में इनका विवाह सेंगा के राठोड़ के साथ हुआ। ये राठोड़ बंदि में गया और एक अन्य के साथ विवाह कर लिया, इस कारण प्रेमाबाई को अत्यन्त दुःख हुआ और उनको जीवन से विरक्ति सी हो गयी।

संत समर्थदासजी से मिलने पर उन्होंने इनको उपदेश दिया और इनका जीवन एक साध्वी का जीवन बन गया। पाटण से सुरत में सदगुरू के दर्शन के लिए आयी, वहाँ उनकी मुलाकात माधवदासजी से हुई। संत माधवदास में इन्होंने महागुरू समर्थदासजी के दर्शन किए। संतों के समागम से उनके ज्ञान चक्षु खुल गए तथा जनता में भक्ति भाव का प्रचार करने के लिए उन्मुक्त हुई।

संत माधवदासजी ने ई.स. 1596 में समाधी ले ली। गुरू की मृत्यु के समाचार सुनते ही प्रेमाबाई दुःख के सागर में डूब गई और अपने प्राण त्याग दिए।

प्रेमाबाई ने हिन्दी तथा गुजराती दोनों भाषाओं में संतवाणी की रचना की है। इनके द्वारा रचित पदों में इनके जीवन विषयक अनेक घटनाओं का वर्णन मिलता है। गुरूजी के आश्रम में आकर जीवन बिताने तथा ईश्वर के भजन में मस्त रहने के कारण इनका मन भगवत भजन में रम गया जिसका स्पष्ट प्रभाव इनकी रचनाओं में मिलता हैं। "सदगुरू दिए संजीवनी घूंटी" कहकर गुरू को विशेष महत्त्व दिया है। इनकी साखियाँ भी गुरू-भक्ति, गुरू-वंदना, गुरू के उपदेशों आदि से पूर्ण हैं। इनके द्वारा रचित छिट-पुट साखियाँ उपलब्ध हैं।(1)

प्रेमाबाई द्वारा रचित 3 अप्रकाशित साखियाँ उपलब्ध हैं।

---

(1) माणेकलाल राणा से उपलब्ध हस्तप्रत के आधार पर

संत दादू दयाल : ॥1544 ई से 1603 ई. तक॥

संत दादू के जन्म जाति और मृत्यु के विषय में विद्वानों में मतभेद हैं। अधिकांश विद्वानों का मत है कि दादू का जन्म अहमदाबाद में हुआ था। इनका जीवनकाल मुगल सम्राट अकबर के जीवनकाल के समसामयिक था। सम्राट अकबर इनसे प्रभावित थे और 1586 में मिले थे।[1] दादू दयाल और अब्दुर्रहिम खां खानखाना ॥1577 ई. से 1647 ई. तक॥ से भी भेंट होने की जनश्रुति प्रसिद्ध हैं, इन दोनों की रचनाओं में भी समान भाव दिखाई पड़ते हैं।[2] संत दादू ने अनेक स्थानों का भ्रमण किया और एक स्थान पर अनेक दिनों तक रहे। अत: उस प्रान्त के लोग उनके जन्म स्थान से परिचित न होने के कारण उपस्थित प्रदेश को ही उनके जन्म स्थान का नाम दे दिया।

दादू के गुरू के बारे में भी विद्वानों में अनेक शंकाएं हैं। कुछ विद्वान रामानन्द को तो कुछ बुड्ढन को इनका गुरू बताते हैं। कुछ विद्वान इनको कमाल का शिष्य भ्र मानते हैं। इन पर कबीर-वाणी का स्पष्ट प्रभाव पड़ा हैं। यह कबीर के प्रति अगाध और अनन्य श्रद्धाप्रधान उक्तियों से प्रकट होती है।[3]

दादू के जीवन का अधिकांश समय सत्संग चिंतन - मनन आदि में व्यतीत हुआ। दयालुता, नम्र स्वभाव एवं क्षमाशिलता के कारण दादू प्रसिद्ध थे जिससे इनका नाम "दयाल" पड़ा।

॥1॥ संक्षित संत सुधा सार - ॥पृ0 262॥

॥2॥ उत्तर भारत की संत परम्परा ॥पृ0 409॥

॥3॥ हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन ॥पृ0 108॥

दादू बड़े प्रभावशाली संत थे उनके अनुयायियों की संख्या बड़ी विपुल थी । कहा जाता है उनके 152 शिष्य थे, जिनमें बखना, रज्जबदास, जगजीवनदास, सुन्दरदास, मोहनदास आदि प्रमुख थे ।[1]

दादू ने लगभग बीस सहस्त्र रचनायें की है । इनमें से जो हमें जो प्रकाशित रूप में उपलब्ध हुईं वे इस प्रकार हैं :-

(1) संत दादू और उनकी वाणी
(2) दादू दयाल की बानी -
(3) दादू दयाल का सबद
(4) स्वामी दादू दयाल की वाणी -
(5) दादू दयाल की वाणी

दादू ने लगभग 2,652 साखियाँ लिखी हैं । जाति-पाती के भेदभाव को मिटाने के लिए, हिन्दू-मुसलमान में समन्वय स्थापित करने के लिए धार्मिक ग्रंथ के रूप में उनकी साखियों को प्रयोग कर सकते हैं । कबीर की तरह दादू ने फटकारा नहीं बल्कि प्रेमभाव से दोनों धर्मों में मेल-मिलाप की भावना को बढ़ाया है । इनकी साखियों में प्रेम और विरह का निरूपण अति सूक्ष्म रूप से हुआ है । प्रेम इनकी साखियों में सर्वत्र बिखरा पड़ा है ।

----

(1) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 63)

संत दादू द्वारा रचित प्रकाशित हिन्दी साखियाँ निम्नलिखित अंगों में उपलब्ध हैं :-

क्रम संख्या	अंगों के नाम		साखियों की संख्या
1	गुरुदेव कौ अंग	... ...	16
2	सुमिरण कौ अंग	... ...	15
3	विरह कौ अंग	... ...	23
4	परचा कौ अंग	... ...	23
5	हैरान कौ अंग	... ...	6
6	लैकौ अंग	... ...	5
7	निहकर्मी पतिव्रता कौ अंग	... ...	16
8	चितावणी कौ अंग	... ...	3
9	मन कौ अंग	... ...	8
10	माया कौ अंग	... ...	25
11	साध कौ अंग	... ...	13
12	मधि कौ अंग	... ...	11
13	पीव पिछाण कौ अंग	... ...	3
14	जीवतमृतक कौ अंग	... ...	5
15	सूरातन कौ अंग	... ...	7
16	काल कौ अंग	... ...	8
17	सजीवन कौ अंग	... ...	7
18	दया निवरता कौ अंग	... ...	10
19	सुन्दरी कौ अंग	... ...	4
20	निंदा कौ अंग	... ...	2
21	बिनती कौ अंग	... ...	11

3

भक्त कवयित्री अन्नपूर्णा : ईं0 1547 - 1569

भक्त कवयित्री अन्नपूर्णाजी अम्बालिका का जीवनकाल अति अल्प समय का था । इनका जन्म ईं0 1547 में हुआ तथा मृत्यु ईं0 1569 में हुई । इस अल्प समय में इन्होंने अनेक रचनायें की तथा गुरू के पास रहकर भगवत गान आदि में ये इतनी निपुण हो गई कि इनकी प्रशंसा चारों तरफ होने लगी । इनके पिता वामदेव के देहान्त के पश्चात् इनकी माता वसुमती अपने पति के साथ सती हो गई । गाँववालों की कृपा से नन्हीं बालिका संत निर्वाण साहब के पास पहुँच गई तथा उसका पालन पोषण वहाँ होने लगा । इस अल्प जीवन में इन्होंने अनेक लोगों की सहायता की, दु:खिजनों का कष्ट निवारण किया तथा अनेक लोगों को पाप कर्म से निवृत्त किया । इनके समय में उत्तर-खंड से दक्षिण रामेश्वर के तरफ जा रही संतों की टोली संत निर्वाण साहब के दर्शन के लिए आयी । महंत कुबेरदासजी ने अपनी ज्ञान चक्षु के द्वारा अन्नपूर्णा में दिव्य शक्ति का दर्शन किया ।[1]

भक्तों की संख्या में वृद्धि होने के कारण उनकी चर्चा सारे शहर में होने लगी । अल्प आयु में दिव्यानुभूति तथा तिक्ष्ण विवेक शक्ति के कारण संतजन उनके भक्त बन गये तथा उन्हें माता कहकर पुकारने लगे ।[2]

इनके द्वारा रचित पद भजन तथा साखी आदि हमारी साहित्यिक धरोहर है। इनकी भाषा ब्रजभाषा मिश्रित गुजराती है । छंद अलंकार आदि का अत्यधिक प्रयोग इनकी रचनाओं में नहीं मिलता । सीधी सरल और स्पष्ट रूप से इन्होंने अपनी ज्ञान वाणी को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया । अन्नपूर्णाजी की साखियों से इनके जीवन में घटित घटनायें, समाज सुधार की बातें, निर्वाणजी की शिक्षा तथा गुरू के प्रति भक्तिभाव आदि का पूर्ण विवरण हमें प्राप्त होता है । मुख्यत: अन्नपूर्णाजी संत निर्वाण साहब द्वारा रचित सिमल संत वाणी के उपदेश तथा वैराग के पदों को गाती । पालक पिता की तरह पुत्री भी भक्तजनों को आनन्द प्रदान करती थी । न केवल रचना प्रक्रिया में बल्कि गायन वादन में भी अन्नपूर्णाजी निपुण थी । भक्ति, ज्ञान, वैराग और उपदेश की अनेक साखियाँ लिखी हैं । इनके द्वारा हिन्दी में रचित 34 साखियाँ उपलब्ध हैं । ये सभी प्रकाशित हैं ।

---

1 निर्वाण साहब - पृ0 394

2 सूरत की हिन्दी संत कवयित्री - कान्ती कुमार भट्ट पृ0 16

संत तेजानंद स्वामी : ॥ई॰स॰ 1556 - 1624॥

संत तेजानंदजी ने मारवाड़ के जयतार नामक गाँव के ब्राम्हण कुल में जन्म ग्रहण किया । माता पिता की मृत्यु के पश्चात तेजानंदजी अति अल्प आयु में ही संसार से विरक्त हो गए । ज्ञानी संतों ने इनको जेठड़ा जाने की सलाह दी । जेठड़ा में आकर रामानंद सम्प्रदाय के संत कुबादासजी को अपना गुरू बनाया और उनके उपदेशों का पालन करने लगे । आश्रम में रहते हुए भी तेजानंद जी एकान्त प्रिय थे और ध्यान मग्न होकर भगवत भजन में लिप्त रहने लगे ।॥1॥

संतों के समागम के लिए अर्बुदा पर्वत पर गये, अनेक संतों से मिले और कुछ समय साधना में लिप्त रहने के बाद फिर नीचे आकर अनेक तीर्थ स्थानों का दर्शन किया । गुरू की आज्ञानुसार गुजरात आकर धर्म प्रचार हेतु दक्षिण गुजरात के मोहनपुर से होकर श्यामलपुर की तरफ यात्रा की । उस समय सुरत में नवाबों का शासन चल रहा था । मुगल सम्राट अकबर ने अपने वजीर टोडरमल को सुरत में राजकाज सम्भालने के लिए भेजा । तेजानंद जी ने अपने प्रबल प्रताप से सम्राट के वजीर को अपना अनुयायी बना लिया । खरबाला के संतधाम में आनन्द सहित टोड़रमल ने अपना समय व्यतीत किया । इनके विदाय के समय तेजानंद जी ने कहा -

शहर दिल्ली से आईया,
संत दरश दिलजान् ।
तेजानंद गुरुए मिले
टोडर बड़े सुजान ।।"

॥1॥ "तेजानंद स्वामी" - ॥पृ0 13॥

तेजानंद स्वामी ने अपने तेजस्वी प्रभाव से जादूगर, तेष्टाराम, मदलेखा, पठान दिदारखान आदि लोगों का हृदय परिवर्तन किया तथा अपने महत उपदेश से इन कुपथ गामियों को भगवत भजन में प्रवृत्त किया । संत किरात सोढ़ाजी, ध्यानी संत तुलजाराम, भक्त बालाजी, साध्वी रानीबाई, भक्त दामाजी, भक्त कालाजी, भक्त खेमो, किरात आदि इनके प्रधान भक्त थे । प्राय: ये सभी शिष्य कुकर्म में लिपृत रहते थे । इनको ईश्वरोन्मुख करके समाज के सुव्यवस्था लाने का श्रेय सदगुरू तेजानंदजी को जाता है ।[1]

तेजानंद जी धार्मिक समन्वयता के प्रतीक थे । उनके मन में हिन्दु-मुसलमान का कोई भेदभाव नहीं था । अत: विविध धर्मों के अनेक संतों का समागम उनके आश्रम में होता था जिनमें हिन्दु-मुसलमान दोनों धर्मावलम्बी सम्मिलित होते थे । उनमें कुछ प्रमुख संतों के नाम हैं - पठान दिदार खान, सुफी संत मासुक साहब, बाबा बलाल खान, बाबा याकुत खान, बाबा अमंद शेख, बाबा मन्नत खान, सैयद मलखारी साहब, सैयद हसनजी साहेब, ख्वाजा दहेदार साहेब, संत समर्थदास, संत माधवदास, संत हिरादासजी, संत प्यारेदासजी, बाबा अडबंगनाथ, बाबा दिगम्बरदास, संत विरागदास, मस्त ध्यानी गुरूदास, योगीराज गिरिनाथ, संत मालवदास आदि । ये संत आश्रम में रहकर गुरू की सेवा करते, उनका उपदेश सुनते तथा समाज कल्याणकारी कार्य में लिपृत रहते थे ।

भक्तों के जीवनचरित्र से इस बात की पुष्टि हो जाती है कि न केवल ये भगवत भजन तथा समाज कल्याणकारी कार्यों में लिप्त रहते अपितु अनेक प्रकार के चमत्कारों से भी इनका जीवन मंडित है ।[2] तेजानंद स्वामी जी के जीवन में भी यह स्पष्ट परिलक्षित होता है । कहीं इनकी दया से अंधे को आँख मिल

---

(1) संत तेजानंद स्वामी - (पृ० 51)

(2) संत तेजानंद स्वामी - (पृ० 56)

जाती है, कहीं आंबा का वृक्ष आमली में बदल जाता है । कभी हमें यह भी देखने को मिलता है कि मृत शरीर में प्राण की स्थापना भी तेजानंद स्वामी ने कर दी हैं ।

संतों के जीवन में भी विभिन्न प्रकार के रंगों का समावेश देखने को मिलता है । समानता - भ्रातृता और निष्पृहता ये संत तेजानंद की विशेषता है । ईश्वर भजन के साथ-साथ इनकी सादगी, सरलता और हिन्दु-मुस्लिम एकता की भावना आज के आधुनिक समाज में भी विरल है । महापुरूष तेजानंद महाराज भक्तों के लिए दिव्य ज्योति स्वरूप आज भी जीवित है । इनके भक्तगण इनके द्वारा दिखाए गये राह पर आज भी चल रहे हैं और जनता को पवित्र मार्ग पर चलने की शिक्षा दे रहे हैं । तेजानंद स्वामी एक मस्त भजनिक संत थे इनके द्वारा लिखी गई साखियाँ आज भी गाई जाती है । इनकी भाषा सरल और साधुक्कड़ी है । साधारण लोग भी इसका रसास्वादन कर सकते हैं -

यह संसार असार है, मानो बड़ो उत्पात
उबरन चहे तो सुन लो, तेजानंद की बात ।

इन्होंने अपनी साखियों में "सदगुरू की कृपा" को ही अधिक महत्व दिया है ।

"सदगुरू संत पुकारते, चतुर होय सो चेत ।"

इनके सदगुरू ने इन्हें जिस प्रकार इस अंधकारमय संसार में उजाला दिखाया है उसी प्रकार जनगण के मध्य उन्होंने "राम" को स्मरण करने का उपदेश देकर उजाला दिखाने का प्रयास किया है ।

"राम भजन कर लिजिए, तेजानंद बड़भाग ।"

साधारण जनता में भक्ति भाव को प्रधानता देने के लिए एक मूर्त रूप की स्थापना हेतु तेजानंद जी ने राम को आराध्य देवता माना । उनके आदर्शों की मान्यता स्थापित करते हुए संत ने कहा है - "तेजा सोही संतजन, अमृत पावैसार, शब्द दूध धृत राम रस, जेठी विलोवण हार ।" तेजानंद स्वामी की साखियाँ प्राय: फूटकल में ही उपलब्ध होती है । इनकी लगभग 37 साखियाँ हिन्दी में प्रकाशित हैं । कहीं कहीं गुजराती का प्रभाव परिलक्षित होता है ।

<u>बाबा लोचन स्वामी</u> : ॥ई.स. 1560 में समाधिस्थ हुए॥

भृगुपुर - भरूच के ब्राम्हण कुल में लोचन स्वामी का जन्म हुआ । बचपन से ही ईश्वर के भजन में इनका मन लीन रहता था । अत: संसारिक बन कर जीवन व्यतीत करना इनका उद्देश्य नहीं था । युवावस्था मेंही इनके हृदय में वैराग की भावना जागी और इन्होंने गृहत्याग दिया । काशी गये, वहाँ कबीरदास तथा पद्मनाभजी से उपदेश ग्रहण किया । इससे इनके चंचल मन में स्थिरता आयी । इन्होंने पद्मनाथजी को गुरू बनाया । मणिकूट पर्वत पर जाकर इन्होंने ध्यान किया, वहाँ से सिद्धी लाभ करके चरोतर आये ।[1]

संत भाभाराम का नाम स्मरण करके इनके हृदय में उनके दर्शन की अभिलाषा जागी अत: वे चंपकवन आये । ध्यानावस्था में भाभाराम का दर्शन करके लोचन के हृदय में अनुराग उत्पन्न हुआ । ये एक मस्त भजनिक थे । भाभाराम के हृदय में भी भजनरंग लग गया और मुक्त हृदय से ईश्वर के भजन के साथ-साथ बाबा लोचन के गुणगान भी करने लगे ।[2]

बाबा लोचन एक महान प्रभावी संत थे । उपदेश देकर इन्होंने अनेक जीवों का उद्वार किया । ईस्लाम धर्म का प्रभाव अधिक होने के कारण समाज में वैमनस्य की भावना अधिक थी अत: धार्मिक भेदभाव को मिटाकर समाज में समता, एकता और शान्ति स्थापित करना बाबा लोचन स्वामी का प्रधान उद्देश्य था ।

इनके मुख्य शिष्य समर्थदास थे । ये जाति के वाणिक थे । सुबेदार के पास सिपाही थे । सुबेदार की पुत्री हुराबाई समर्थदास पर मोहित हो गई । समर्थदास लोचन स्वामी के पास आकर वैरागी बन गये । अत: हुराबाई भी

॥1॥ संत भाभाराम - ॥पृ0 459॥

॥2॥ संत भाभाराम - ॥पृ0 456॥

लोचन स्वामी की शिष्या बन गईं । लोचन स्वामी के अन्य शिष्य थे हिभाराम, पंजुदास, अकलदास, नथ्थुदास, नेजादास, तेजुदास, महिपाल तथा दुलारी गायिका ।[1]

बाबा लोचन स्वामी ने अनेक रचनायें की है । इनके द्वारा रचित पद, भजन तथा साखियाँ भगवत भाव से परिपूर्ण है । इन्होंनें कबीर परम्परा की धारा में रचनायें की है । अल्लाह और ईश्वर में समानता को महत्व दिया है । साखियों का मुख्य तत्व भेदभाव को दूर करके समन्वय स्थापित करना था । इनकी साखियाँ शुद्ध बृजभाषा में हैं । कहीं कहीं गुजराती का प्रभाव दिखाई पड़ता है । एक सच्चे समाज सुधारक तथा योगी होने के कारण इनकी रचनायें संत साहित्य में उच्च स्थान रखती है । इनकी साखियाँ हमारी महत्वपूर्ण धरोहर हैं ।

लोचन स्वामी ने गुरू को अधिक महत्व दिया है । अपने गुरू पद्मनाथ की साख भरकर कवि ने सारगर्भित साखियाँ रची हैं ।

लोचन स्वामी द्वारा रचित 6 साखियाँ उपलब्ध हैं जिनकी भाषा हिन्दी है और ये साखियाँ अप्रकाशित हैं ।

---

[1] कबीर परम्परा - डॉ० कान्ति कुमार भट्ट [पृ० 104]

5

<u>जीवणदास</u> : ईई. 1593 से 1681ई

जीवणजी महाराज का जन्म स्थल उनके माता पिता का नाम आदि की प्रामाणिकता संदिग्ध है । एक दोहे से इनके परिवार के संबंध में कुछ पता चलता है परन्तु यह ठिक नहीं है ।

"काठियावाड़ मेरो कुटुंब भयो, मथुरा मेरो देश ।
संतो तणे मेव्वावड़े हुँ आव्यो गुर्जर देश ।।"

कहा जाता है ग्यारह वर्ष की उम्र में ई.स. 1604 में गोरिपाद ईजि. बड़ौदाई आये । इससे पूर्व इनके जीवन विषयक कोई समाचार नहीं मिलता है । जीवणजी ने अपनी ही वाणी में कहा कि वे कणवी कुल के हैं श्रीराम इनके आराध्य देव हैं और इनके सदगुरू है गोपालदास । ई.स. 1608 में इनके गुरू से इनका मिलन केसुंबल में हुआ । ई.स. 1625[1] में इन्होंने गुरू गोपालदासजी से गुरु दीक्षा ली ।

सौराष्ट्र के दूधरेज गाँव में पद्मनाभजी के शिष्य निलकंठदास के परम्परा का स्थल है । इस परम्परा के एक संत षट्प्रज्ञदास ईछठा बाबा ई.स. 1612 से 1730 तकई हुए । श्री मायादास ने इनकी जीवनी "श्री सत्पुरुष चरित्र प्रकाश" लिखी है जिसमें ईपृ0 491 - 578ई जीवणजी का आगमन तथा उनसे मिलन का वर्णन है । जीवणजी महाराज 500 विरक्त भक्तों के साथ दूधरेज ईसौराष्ट्रईआये वहाँ उनके एक चमत्कार का भी वर्णन है जिसमें कहा गया है कि इन्होंने दूध की गंगा बहा दी । जबकि दूध अति अल्प परिमाण में उपलब्ध था ।[2]

ई1ई कबीर परम्परा - ईपृ0 144ई
ई2ई कबीर परम्परा - ईपृ0 146ई

वहाँ से जीवणजी गोंडल गये । वहाँ से द्वारका की यात्रा की । द्वारका से मालवा होकर जगन्नाथजी का दर्शन करने गये । दर्शन के बाद मूल अयोध्या (फैजाबाद) जाकर बद्रीनाथ की यात्रा करके कैलाव पर्वत पर चढ़ गये । वहाँ से मगहर गये । इतनी लम्बी यात्रा के दौरान जीवणजी का समागम अनेक संतों के साथ हुआ और ज्ञान और गुरू वचनों का भजन-मनन भी हुआ ।

गुजरात में राम कबीर सम्प्रदाय के प्रचार प्रसार में दो प्रतापी संतों का उल्लेख अनिवार्य है । प्रथम जीवणजी महाराज और द्वितीय थे भाण तथा रविसाहब । इनके जो अनुयायी हुए उनकी अलग शाखाएँ बनी । जीवणजी महाराज के अनुयायी "उदापंथी" कहलाये तथा भाण तथा रविसाहब साहब के अनुयायी "रवीभाव सम्प्रदायी" कहलाये । जीवणजी ज्ञानीजी की परम्परा के हुये तथा भाण साहब पद्मनाभजी की परम्परा के हुए । इन दोनों सम्प्रदाय में किसी भी प्रकार के दिखावे तथा पूजा पाठ को महत्व नहीं दिया जाता है । व्रत, तप, तीर्थ, यज्ञ, ध्यान, होम, श्राद्ध, गृहशांति, विधि, कर्मकाण्ड, किसी का भी इस सम्प्रदाय में कोई स्थान नहीं है । धनी गरीब दोनों इन सम्प्रदायों में समान रूप से सम्मान पाते हैं ।

जीवणजी ने अपने शिष्य कृष्णदास को दीक्षा देते समय "रामकबीर" शब्द का उच्चारण किया था । कृष्णदास के शंका व्यक्त करने पर जीवणजी ने इसे दूर करते हुए कहा कि "राम कबीर" को विरला संत पुरूष ही पहचान सकता है । (1)

जीवणदासजी ने हिन्दी तथा गुजराती दोनों भाषाओं में रचनायें की हैं । इनकी रचनाओं में गोपीभाव की प्रमुखता है । इनका विशाल "साखी ग्रंथ" ज्ञान तथा धर्म समन्वय की भावना से भरा है ।

----

(1) राम कबीर सम्प्रदाय - (पृ0 152)

जप तप तीरथ जीवणा । पूजा पाती प्रेम ।।
संत संगत हरिभक्ति बिन । उर न दूजो नेम ।।

अनेक संतों ने जीवणजी के साथ भक्ति के स्वरूप के विषय में ज्ञान गोष्ठी की । इसमें जीवणजी से प्रश्न किया गया कि -

आप समान विरक्त को, विचरन लग परकाज ।
सूनी वचन षद् प्रश्न के, श्री जीवन महाराज ।। ।0।

इसके प्रत्युत्तर में जीवन ने स्पष्ट किया कि भक्ति दो प्रकार की होती है - साधन रूपा और साध्य रूपा ।

जीवणदास ने अपनी साखी ग्रंथ में अपना परिचय जन्म स्थान, लक्ष्य आदि का उल्लेख किया है -

काठियावाड़ मेरो कुटुंब भयो, मथुरा मेरो देश ।
संतो तणे मेलावड़े हूँ आव्या गुर्जर देश ।।

ग्रन्थ का आरम्भ कवि ने गुरू, अपना नाम और अपनी जाति के विषय में उल्लेख किया है -

"नाम हमारो जीवणा कणवी कुल अवतार
साँई हमारो रामजी, सदगुरू दास गोपाल ।।"

जीवणजी के स्वधाम गमन के विषय में ¡मुनिपाद की गद्दी से जो हस्तप्रत उपलब्ध है उसमें¡ इस प्रकार उल्लेख है -

"संवत् सत्तर से सात बीस, सुद पंचमी भादुर मास ।
तादिन जीवणदासजी, लियो स्वधाम निवास ।।"

जीवणजी ।ई॰स॰1593 – 1781। – द्वारा रचित 100 गुजराती तथा 791 हिन्दी अंग बद्ध साखियाँ :-

क्रम सं0	अंगों के नाम		साखियों की संख्या
1	गुरूदेव को अंग	... ...	164
2	संत को अंग	... ...	63
3	दास को अंग	... ...	114
4	विरह को अंग	... ...	15
5	काल को अंग	... ...	56
6	सुरा को अंग	... ...	26
7	प्रेम को अंग	... ...	64
8	पतिवृता को अंग	... ...	10
9	उनदेश को अंग	... ...	10
10	भेख को अंग	... ...	31
11	आनदेव को अंग	... ...	27
12	भ्रम विश्वास को अंग	... ...	30
13	माया को अंग	... ...	43
14	साकुत को अंग	... ...	28
15	सलील को अंग	... ...	17
16	व्याभिचारी को अंग	... ...	10
17	कामी को अंग	... ...	10
18	ब्रम्हज्ञानी को अंग	... ...	21
19	गर्भावली को अंग	... ...	30
20	प्रबोध को अंग	... ...	156
21	अपाध को अंग	... ...	66

जीवणजी द्वारा रचित सभी साखियाँ प्रकाशित है । उपरोक्त अंगों में विभक्त इनकी कुल 891 साखियाँ हैं । इनमें से 100 के आसपास गुजराती साखियाँ है । संत टकसाल की भाषा में 791 साखियाँ उपलब्ध हैं ।

<u>अखा</u> : ‖ई.स. 1615 से 1675‖

अखा, मध्यकालीन गुजराती साहित्य के ज्ञानी एवं अग्रगण्य कवि थे । गुजरात के वेदान्तिक कवियों के अन्तर्गत अखा सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं । इनका आत्मचिन्तन वेदान्त की प्रखर भूमि में तप कर बिखर गया और इन्हें समाज में एक विशिष्ट ज्ञानी कवि के नाम से प्रतिष्ठित किया ।

अखा का जन्म जेतलपुर के सोनी परिवार में ईस. 1615 में हुआ तथा निधन ई.स. 1675 में हुआ था । एक पुत्री क जन्म के उपरान्त उनकी माता का देहान्त हो गया तथा उनके पिता ने इनका विवाह अति अल्प आयु में ही कर दिया ।[1] व्यवसाय के लिए इनके पिता अपने परिवार के साथ अहमदाबाद आ गए । यहाँ उनकी पत्नी तथा बहन दोनों की मृत्यु हो गई । दूसरी बार विवाह करने पर उस पत्नी की भी मृत्यु हो गई । इस प्रकार अखा के मन में वैराग का संचार हुआ और वह साधु महात्माओं की संगत के लिए एक जगह से दूसरी जगह घुमने लगे । अपनी धर्मभगिनी द्वारा भी अविश्वास किये जाने पर अखा का मन संसारिक संबंधों से और टूट गया ।

श्री कन्हैयालाल माणेकलाल मुन्शीजी ने "गुजरात एन्ड इट्स लिटरेचर" में लिखा है कि अख अखा शाही टकसाल के प्रधान थे । उन पर यह आरोप लगाया गया कि उन्होंने सरकारी सिक्कों की धातु में मिलावट की है । फलत: अशान्त मन लेकर जेल से छुटने पर शान्ति की खोज में निकल पड़े । घुमते-घुमते अखा मथुरा पहुँचे, वहाँ उन्होंने बल्लभाचार्य के चौथे पौत्र श्री गोकुलनाथ जी के पास से दीक्षा ली ।[2] किन्तु इनसे उनकी ज्ञान पिपास शान्त नहीं हुई । इसके पश्चात् ये काशी गए । वहाँ एक सन्यासी से उनका परिचय हुआ जो अपने शिष्य को

‖1‖ साहित्यकार अखो - प्रकाशक हरिभाई रा. देसाई ‖पृ0 3‖

‖2‖ साहित्यकार अखो - प्रकाशक हरिभाई रा. देसाई ‖पृ0 4‖

वेदान्त की शिक्षा दे रहे थे । इनसे प्रभावित होकर गुप्त रूप से अखा ने इनसे दीक्षा ली और यहीं वेदान्तशास्त्र से संबंधित ग्रन्थों का गहरा अध्ययन किया ।

अखा की काव्य प्रवृत्ति कब से विकसित हुई यह कहना असम्भव है क्योंकि साहित्यकारों का इस विषय में मतभेद है । परन्तु यह माना जाता है कि प्रौढ़ अवस्था में यात्रा करने के पश्चात् इन्होंने काव्य रचना आरम्भ की । इस विचार को अखा ने अपने"फुटकल अंग" के आरम्भ में ही स्वीकार किया है । स्वभाषा गुजराती में रचना करने के साथ-साथ अखा ने हिन्दी भाषा में भी पदों, सवैयों तथा विपुल परिमाण में साखियों की रचना की है । "संतप्रिया" और "ब्रम्हलीला" इस प्रकार की कृतियाँ हैं ।[1] अखा की गुजराती कृतियों में साखियाँ, पद, छप्पा, सोरठा आदि मुक्तकाव्यात्मक रचनाओं के अतिरिक्त प्रबंधात्मक कृतियों में अनुभवबिंदु, चित्त विचार संवाद, गुरू शिष्य संवाद, अरवेगीता आदि विशेष उल्लेखनीय है ।

अखा के समकालीन शासक जहाँगीर थे । ये एक सच्चे साहित्य प्रेमी थे । अखा के समकालीन कवि प्रेमानंद, शामल तथा बल्लभभट्ट आदि प्रमुख थे ।[2] अखा की शिष्य परम्परा बहुत लम्बी है । उनके प्रमुख शिष्यों में
(1) वीरपुर के लालदास, (2) अहमदाबाद के हरिकृष्ण महाराज,
(3) सुरत के जीता मुनी नारायण, (4) कान्हवा के कल्याणदास जी
विशेष उल्लेखनीय है । इनके उपरान्त पूर्णानंद, दयानंद और भगवानजी महाराज इनके शिष्यों के प्रशिष्य रहे ।[3]

----

(1) साहित्यकार अखो - (पृ0 9)
(2) साहित्यकार अखो - (पृ0 168)
(3) साहित्यकार अखो - (पृ0 20)

केशवलाल ठक्कर जेसलपुरा द्वारा ई॰स॰ 1952 में "अखा जी नी साखियों" का प्रथम प्रकाशन हुआ। इसमें अखा की हिन्दी - गुजराती ~~लिपि~~ दोनों भाषा की साखियाँ गुजराती लिपि में प्रकाशित की गईं। कान्हवा बंगले के श्री भगवान जी महाराज से इन हस्तप्रतों की प्राप्ति हुई। इसके अन्तर्गत 101 अंगों में विभाजित अखा की 1726 साखियाँ हैं।[1]

अखा ने अपनी साखियों में जन समाज को चेतावनी देकर जगाया है तथा अधर्म और अंध विश्वास का खण्डन किया है। मिथ्याहंकार को त्याग कर उन्नति के मार्ग पर चलने का उपदेश दिया है। इनकी भाषा सरल तथा आडम्बर हिन है।[2]

इनकी हिन्दी और गुजराती साखियाँ साहित्य जगत की अमूल्य निधि हैं।

---

[1] साहित्यकार अखो - पृ0 106

[2] साहित्यकार अखो - पृ0 169

<u>अखा</u> : (ई.स. 1592 - 1665)

अखा की अंग बद्ध हिन्दी साखियाँ :-

क्रम सं0	अंगों के नाम	साखियों की संख्या
1	गुरू क्षेत्र	5
2	आत्मज्ञान को अंग	15
3	सूझ अंग	8
4	अनभै अंग	6
5	अदबद अंग	16
6	पूरब जनम अंग	11
7	प्रत्यक्ष अंग	14
8	कुमति अंग	11
9	संते अंग	11
10	संत परिहार अंग	10
11	शब्द परीक्षा अंग	16
12	परीक्षा अंग	7
13	विवेक वेत्ता अंग	12
14	निष्ट ज्ञान अंग	29
15	विरही अंग	19
16	तत्व भेद को अंग	5
17	विभ्रम अंग	2
18	स्वे अंग	17
19	दीसा अंग	16
20	सम दृष्टि अंग	24
21	भोरी भक्ति अंग	22
22	अधम अंग	17
23	सुरपमा अंग	7
24	हेरा अंग	5
25	हंस परीक्षा अंग	12
26	क्रम जड़ अंग	7

क्रम सं0	अंगों के नाम				साखियों की संख्या
26	क्रम जड़ अंग	...	...	...	7
27	अकल अंग	...	...	...	4
28	भक्ति विवेक अंग	...	...	...	5
29	नंदीक अंग	...	...	...	10
30	गुलतान अंग	...	...	...	14
31	वीटइ अंग	...	...	...	15
32	क्रीपा अंग	...	...	...	6
33	ज्ञानदग्ध अंग	...	...	...	23
34	समस्या अंग	...	...	...	8
35	मरसा अंग	...	...	...	12
36	लंपट अंग	...	...	...	14
37	चीदाकास अंग	...	...	...	05
38	दुर्मति अंग	...	...	...	10
39	आत्मय परीचा के अंग	...	...	...	16
40	उपदेश अंग	...	...	...	35
41	गिरीबि अंग	...	...	...	9
42	ब्रम्हसागर अंग	...	...	...	3
43	श्रीक्षा अंग	...	...	...	11
44	नुगरा सुगरा की पेहेनाव	...	...	...	5
45	हैरान अंग	...	...	...	20
46	हरिजन अंग	...	...	...	33
47	प्राप्ति अंग	...	...	...	22
48	राम परीक्षा अंग	...	...	...	20
49	संसारी अंग	...	...	...	14
50	गैबी अंग	...	...	...	15
51	महाकला अंग	...	...	...	18

क्रम सं०	अंगों के नाम				साखियों की संख्या
52	गुरू को अंग	...	...	...	22
53	आसा को अंग	...	...	...	20
54	नैरासी को अंग	...	...	...	47
55	देह दरसी को अंग	...	...	...	22
56	आतुरता को अंग	...	...	...	30
57	क्रीपा को अंग	...	...	...	36
58	हीरा को अंग	...	...	...	6
59	वैध को अंग	...	...	...	6
60	असंत को अंग	...	...	...	12
61	अथ सीक्षा अंग	...	...	...	12
62	नीष्ट ज्ञान को अंग	...	...	...	20
63	अजब को अंग	...	...	...	16
64	तपास अंग	...	...	...	8
65	सम ज्ञानी को अंग	...	...	...	11
66	दुनिया अज्ञान अंग	...	...	...	35
67	प्रेम प्रीछ को अंग	...	...	...	17
68	चेतन को अंग	...	...	...	25
69	असंत को अंग	...	...	...	16
70	कपटि को अंग	...	...	...	6
71	अनुभव को अंग	...	...	...	9
72	प्रतीत को अंग	...	...	...	8
73	अथ ज्ञान को अंग	...	...	...	19
74	असमानी को अंग	...	...	...	15
75	चातक को अंग	...	...	...	20

क्रम सं0	अंगो के नाम				साखियों की संख्या
76	खोजी को अंग	...	...	...	11
77	महा विचार को अंग	...	...	...	26
78	कजा को अंग	...	...	...	12
79	चित विकार अंग	...	...	...	23
80	राम रसिया अंग	...	...	...	25
81	शिष्य आतुरता को अंग	...	...	...	13
82	सती को अंग	...	...	...	16
83	ज्ञानी को अंग	...	...	...	11
84	वेहद को अंग	...	...	...	12
85	लालन को अंग	...	...	...	20
86	सर्वांग अंग	...	...	...	16
87	शब्दातीत अंग	...	...	...	8
88	नुगरा को अंग	...	...	...	15
89	अथ माया को अंग	...	...	...	5
90	अथ प्रीछ अंग	...	...	...	11
91	अथ भव खोडय अंग	...	...	...	5
92	अथ सहेज अंग	...	...	...	19
93	अथ विश्व-रूप अंग	...	...	...	2
94	अथ कुगुरू को अंग	...	...	...	3
95	अथ हरिजन को अंग	...	...	...	5
96	अथ लक्षहीण अंग	...	...	...	12
97	अथ मरद को अंग	...	...	...	4
98	अथ अनुभव शब्द को अंग	...	...	...	6
99	अथ एक साल अंग	...	...	...	10

क्रम सं०	अंगों के नाम				साखियों की संख्या
100	अथ कुमति अंग	...	...	...	35
101	अथ जागृत अंग	...	...	...	3
102	अथ विदेह अंग	...	...	...	19
103	अथ नैराश अंग	...	...	...	22
104	अथ उदय कैवल्य अंग	...	...	...	15
105	अथ फोम को अंग	...	...	...	12
106	अथ भजन अंग	...	...	...	10
107	आवेस अंग	...	...	...	60

अखा की गुजराती साखियाँ

1	हरि प्रताप अंग	...	...	...	29
2	नैरास अंग	...	...	...	15
3	विश्व रूप अंग	...	...	...	19
4	लक्षहीण अंग	...	...	...	14
5	संसै परिहार	...	...	...	37
6	जागृत अंग	...	...	...	15
7	आशा अंग	...	...	...	3
8	ब्रम्ह विचार अंग	...	...	...	16
9	सदगुरू अंग	...	...	...	12
10	ब्रम्ह सागर अंग	...	...	...	5
11	विदेही अंग	...	...	...	21
12	अथ जागृत को अंग	...	...	...	16
13	सहज सिद्ध अंग	...	...	...	7
14	**विभ्रम अंग**	...	...	...	8
15	अथ विभ्रम अंग	...	...	...	11
16	अथ चेतन को अंग	...	...	...	9
17	अथ तपास अंग	...	...	...	17

उपरोक्त अंगों में विभक्त अखा की लगभग 250 साखियाँ शुद्ध गुजराती भाषा में उपलब्ध हैं। ये साखियाँ अप्रकाशित हैं।

भक्त कवयित्री चन्द्रावती : ⟮1624 ई0 के आसपास⟯

चन्द्रावती का जन्म धरमपुर के राजा जयदेव के वंश में हुआ था । ये अतीव सुन्दरी थी । अतः इनका नाम चन्द्रावती रखा गया था । इन्हें अपना पूर्वजन्म ज्ञात था । फलतः अपने पूर्व जन्म के पति के साथ ही जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया किन्तु सुरत के मुसलमान सुबेदार ने इनके साथ विवाह करने का निश्चय किया था । यह सुनकर चन्द्रावती भेष बदल कर राजमहल से भाग गई । वहाँ से वह तेजानंद स्वामी के आश्रम खरवासा पहुँची । फिर तेजानंद जी से अपने स्वामी से मिलने की आज्ञा लेकर सिद्धपुर पहुँची । वहाँ उनका अपना पति बंकाजी जो कटोसण राजवी खानदान में जन्म ग्रहण करके अपनी पत्नी की खोज में सिद्धपुर आये थे मिले । दोनों ने विवाह कर लिया और सुख से जीवन व्यतीत करने लगे ।

कुछ समय बितने पर माधवदास जी के उपदेश से दोनों संसार से विरक्त हो गये । सुरत में आकर माधवदास के आश्रम में रहने लगे । चन्द्रावती एक बार फिर तेजानंद जी के आश्रम में चली गयी और बंकाजी खुद माधवदास जी के आश्रम में रहने लगे ।

चन्द्रावती के समय सुरत में सूबेदार जुल्फीकार अली खान की हुकूमत चलती थी । ये खरवासा के संत धाम में भी पधारे थे । तेजानन्द स्वामी ने चन्द्रावती को अनेक दुष्टों के हाथों से बचाया । अंत में चन्द्रावती ने अपने को कृश कर लिया । अपने पति बंकाजी के समाधि लेने की खबर सुनमर चन्द्रावती माधवदास जी के आश्रम में आयी और अपने पति के साथ ही समाधि ले ली ।

चन्द्रावती ने अनेक साखियों की रचना की है । उनकी गुरू भक्ति अपार थी । गुरू की महिमा का गुणगान इन्होंने अपनी साखियों में किया है । भक्ति ज्ञान तथा वैराग्य का संमिश्रण इनकी साखियों में मिलता है । इनकी भाषा सरल तथा गुजराती मिश्रित हिन्दी है । कहीं कहीं शुद्ध ब्रजभाषा का प्रयोग भी मिलता है ।

इनकी फुटकी 60 साखियाँ हिन्दी में उपलब्ध हैं । ये सभी साखियाँ अप्रकाशित हैं ।

<u>अनिसा रोशन</u> : ॥1642 ई० से 1700 तक॥

अनिसा रोशन के पिता रोसन जमीर को सूरत के सूबेदार के रूप में नियुक्त किया गया था । उनके साथ उनकी छोटी बेटी भी दिल्ली शहर से गुजरात के सुरत शहर में आयी । सुरत के नवाब साहब के महल के पास ही निर्वाण साहब का धाम था । उस समय संत नरहरिदास ॥ई.स. 1665 - 1700॥ गद्दी के महन्त थे । सूबेदार की बेटी अनिसा भी मंदिर के आंगन में खेला करती थी । संत नरहरिदास के सात्विक जीवन और अध्यात्म वचनों से प्रभावित होकर बालिका अनिवा निर्वाण साहब के उपदेशों को, जो नरहरिदास सुनाते उनको आत्मसात करने लगी । आश्रम के सदाचारपूर्ण माहौल से भी अनिसा अति प्रभावित हुई ।[1]

इस बीच अनिसा के पिता को वापस दिल्ली जाना पड़ा । अनिसा पीड़ित हुई । आठ वर्ष पश्चात् फिर सुरत आने की खबर ने अनिसा को आल्हादित कर दिया । पुन: स्वाभाविक रूप से युवती अनिसा आश्रम में आने लगी । इसे इस्लामी काजी और मौलवियों ने गैर-मजहबी कार्य कहा । पिता के विरोध करने पर भी अनिसा ने आश्रम में आना नहीं छोड़ा । अत: पिता ने उसे विष दे दिया किन्तु संत नरहरिदास जी ने अपने ऐश्वरीय प्रभाव से अनिसा को विषमुक्त कर दिया ।

इस घटना के पश्चात् अनिसा अपने माता पिता को छोड़कर एक अलग मकान में रहने लगी । वहाँ उनको गुप्त धन मिला । जिसको उन्होंने संत सेवा में व्यय किया । जब उनके पिता पुन: दिल्ली वापस जाने लगे तब अनिसा उनके साथ नहीं गयी । सुरत में रहकर जन कल्याण का कार्य करने लगी तथा विपुल संत वाणी की रचना की ।

॥1॥ सूरत के भक्त कवयित्री - कान्ति कुमार भट्ट

91

निर्वाण साहब के उपदेशों की प्रबलता इतनी अधिक है कि इसने एक इस्लाम धर्मावलम्बी के हृदय का परिवर्तन कर दिया। यह महान साध्वी सूरत में रहकर निर्वाण साहब के उपदेशों का प्रचार-प्रसार करने लगी।

अनिसा की भाषा सरल है। इनकी साखियाँ शुद्ध ब्रजभाषा में हैं। कहीं कहीं उर्दू का प्रभाव दिखता है। उन्होंने अपनी साखियों में हिन्दू-मुसलमान के भेदभाव को नकारा है। तथा एकेश्वरवाद को प्राथमिकता दी है।

इनकी 10 प्रकीर्ण साखियाँ ब्रजभाषा में उपलब्ध हैं। ये साखियाँ अप्रकाशित हैं।

उदाहरणस्वरूप एक इस्लाम धर्मावलम्बिनी की कुछ साखियाँ प्रस्तुत हैं -

भोर ही आईं गुरू चरण में, प्रेमे किये पूजन,
पुष्प माल पहेराय के, झुक झुक किये वंदन।

सदगुरू नैन देखत रहे, अनिशा के ढंग
बेटी बड़ी सुभाग हो, धन्य तिहारे रंग

साहिब मेरी कोनगत, बही जात मझधार[1]
अपनी दुहिता जान के, आये खेवन हार॥

शायर दुलाराम ने इनके मृत्यु के विषय में लिखा है -

बड़े बड़े योगी थके, पाया नहीं उस देश,
रोशनारा चली गई, अपने पियु के देश।

धन्य दुहिता संत की, स्मरण किन्हा सवाई।[2]
"दुला पियु घर जाय के, पियु के हृदय समाई॥

---

(1) माणेकलाल राणा से उपलब्ध ह0लि0 से
(2) संत निर्वाण साहब - (पृ0 397)

संत चेतन स्वामी : ई0 1664 के आसपास।

चेतन स्वामी का समय ई0 1664 के आस पास का है । एक गोसाई परिवार के आश्रयहीन बालक थे । सदगुरु कुबादासजी ने इस आश्रयहीन बालक को आश्रय दिया । यह बालक मेहनती और ईश्वर भक्ति में प्रवृत्त रहता था । छोटी उम्र में इसकी ईश्वर के प्रति चेतना को देखकर सदगुरु ने इसे "चेतन" नाम दिया । एकान्त में ईश्वर का नाम स्मरण करने के लिए चेतन गुरु से आज्ञा लेकर उत्तर - हिमालय की गिरिकंदरा पर पहुँचे और वहीं एकाग्र चित्त होकर ईश्वर की आराधना करने लगे । ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् गुरु के पास पहुँचने पर सदगुरु ने इन्हें गुजरात की तरफ यात्रा करने का आदेश दिया ।

गुप्तेश्वर पहुँच कर चेतनस्वामी ने अपनी धुनी जमाई । भक्तगण जमा होने लगे । इनकी ख्याति चारों तरफ फैलने लगी । खरवासा के संतधाम तक इनकी ख्याति फैल गई । सदगुरु तेजानंद स्वामी ने जब इनकी ख्याति सुनी तो खरवाजा की तरफ यात्रा की । दोनों महान संतों के मिलन का दृश्य भक्तों को आल्हादित कर गया तथा दो गुरुबंधुओं का आत्मिक मिलन एक ऐतिहासिक घटना बन गई । तेजानंदजी के आग्रह करने पर संत चेतनस्वामीनेगुजरात के खरवासा जिले में अपना आश्रम स्थापित कर लिया । भक्तों की संख्या में वृद्धि होने लगी तथा दोनों गुरु बंधु मिलकर अपने सदगुरु के उपदेश का प्रचार करने लगे ।

मारवाड़, जेठड़ा, सौराष्ट्र, गीरनार आदि स्थानों में संतों का समागम होता था । इन्हीं स्थानों में चेतन स्वामी अपना आश्रम बनाकर अपने भक्तगणों के साथ भगवत भजन में प्रवृत्त रहते थे तथा गुरु उपदेश का प्रचार करते थे । इन स्थानों का भ्रमण करते हुए संत अपने धर्म का प्रचार करने में प्रवृत्त रहते थे । गिरनार पर्वत के ऊपर ध्यान में बैठकर ईश्वर भजन में प्रवृत्त रहते थे ।[1]

इनकी साखियों की भाषा सरल, हृदयग्राही तथा अध्यात्म भावों से पूर्ण हैं । तेजानन्दजी के प्रभाव की चर्चा भी इन्होंने अपनी साखियों में की है । गुरु बंधु से मिल बैठकर भटके हुए सांसारिक मानव को सच्ची राह दिखाने हेतु चेतनस्वामीजी ने न केवल साखियाँ बल्कि पद, भजन, कुंडलियाँ आदि की भी रचना की है । इनकी 15 हिन्दी साखियाँ उपलब्ध हैं । ये सभी अप्रकाशित हैं ।

<u>लालदास</u> : (ई॰स॰ 1654 से 1744)

लालदास वीरपुर (उत्तर गुजरात) के छीपा भावसार थे । अखा को इन्होंने अपना गुरू कहा है । इन्होंने भी अखा की भाँति गुरू गोविन्द की एकता, असीम भक्ति तथा स्वानुभावपूर्ण ज्ञान का प्रचार किया है । इसी भाव में बह कर इन्होंने रचनायें की है । कुछ लोग इन्हें महात्मा कबीर का अवतार मानते हैं ।

इनके शिष्यों में हरिकृष्ण महाराज एवं जीवणदास ब्रम्हज्ञानी प्रमुख हैं ।

लालदास ने पद तथा साखियों की रचना की है । अखा की रचनाओं का विशेष प्रभाव इनकी साखियों पर देखा जाता है ।

इनकी साखियों में ब्रह्मनिरूपण मुख्य विषय है । "कबीर" शब्द का प्रयोग बार-बार आता है ।

इनकी उपलब्ध साखियों की संख्या 20 हैं । इनकी भाषा हिन्दी हैं ।

इनकी अन्य रचनाओं में सो के कबीर हिन्दी पद अप्रकाशित रूप में भोजे विधाभवन अहमदाबाद में सुरक्षित हैं । उनकी रचनाओं के बारे में विशेष जानकारी भगवानजी महाराज द्वारा संपादित "संतों नी वाणी" तथा डॉ0 योगेन्द्र त्रिपाठी कृत "अखो अने मध्यकालीन संत परम्परा" में उपलब्ध है ।

इन्होंने अपनी रचनाओं में गुरू गोविन्द की एकता, ब्रह्म-निरूपण, प्रणवोपासना, गुरू-भक्ति नाम-स्मरण, स्वानुभूति, अजपा जाप आदि संत परम्परानुमोदित विषयों का वर्णन किया है । ये अखा के शिष्य तो थे ही इनकी वाणी में भी उनका अनुकरण देखा जाता है ।

मेकण दादा : ॥ई.स. 1667 से 1730 तक॥

मेकण दादा का जन्म ई.स. 1667 को आसोज सुद दशमी को कच्छ के एक सामान्य गाँव "नानी खोमड़ी" में हुआ था । इनके पिता का नाम श्री माटी हर धोल एवं माँ का नाम जवबा था ।॥1॥ अपने माता पिता के साथ मेकण की धार्मिक प्रवृत्ति दिन ब दिन बढ़ती गई । दोनों वैष्णवभक्त थे जिसका पूर्ण प्रभाव मेकणजी पर पड़ा ।

मेकण दादा को कच्छ का "कबीर" कहा जाता है । कबीरदास की वाणी जिस प्रकार समाज के प्रत्येक वर्ग के लोगों द्वारा स्वीकार की गई है उसी प्रकार मेकण दादा की वाणी भी समाज के प्रत्येक वर्ग में प्रिय सी है । "दिरध दोहा अरथ के आखर थोड़े आही ।" की परम्परा को मेकण ने अपनी साखी रचना का मूल मंत्र बनाया ।॥2॥

उन दिनों जलाभाव, भूकम्प आदि से यहाँ का जन समाज त्रस्त था । ऐसे समय के लिए मेकण दादा ने एक गधा और एक कुत्ता पाला था जो जल पिपासु लोगों के मध्य घूम-घूम कर लोगों को जल पिलाते थे ।

मेकण रामभक्त थे । भक्ति की उत्कृष्ठता को, उसकी भाव विभोरता को समझाने के लिए गोपीभाव का दृष्टान्त देते थे ।॥3॥ कहीं कहीं दास्यभाव का भी प्रदर्शन हुआ है ।

॥1॥ कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ॥पृ0 12॥

॥2॥ कच्छ ना संतों अने कवियों - ॥पृ0 60॥

॥3॥ कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ॥पृ0 16॥

3

मेकण दादा ने उपदेशात्मक और ज्ञान वर्धक साखियाँ लिखी है । इन साखियों में कवि ने क्षेत्रों का प्रयोग नहीं किया है । साखियों में मेकण दादा ने राम को ही अधिक महत्व दिया है । विश्व में जो तेजमय हैं वह बहुमूल्य है और वह राम है । राम ही जप, तप, तीर्थ, भक्ति, मुक्ति, वैराग, विश्राम, त्याग आदि सब कुछ है । ‌।1।

मेकण दादा ने कच्छी गुजराती हिन्दी में साखियाँ लिखी हैं । कच्छी में कुल मिलाकर 83 साखियाँ, गुजराती में एक साखी और हिन्दी में 27 साखियाँ उपलब्ध हैं । इनकी साखियाँ प्रकाशित हैं ।

मेकणदादा द्वारा रचित एक सुन्दर कच्छी उक्ति प्रस्तुत है -

"कोरीऊ कोरोऊ कुरो करेंओ ? कोरीएं में आय कूड ।
मरी वेंधा मेकण चें, मों मे पोंधी धूड़ ।"

धन के लिए लालायित लोगों को डाँटते हुए कहते हैं - तू धन के लिए क्यों इतनी लालसा रखता है, उसमें तो छल-प्रपंच छिपे है । उससे तेरा कुछ भी भला नहीं होगा । तेरी मृत्यु होगी तो मुँह में धूल ही पड़ने वाली है । [2]

इस प्रकार कवि ने धन पिपासु लोगों को शिक्षा देने का प्रयास किया है और छल प्रपंचों से दूर रहने का उपदेश दिया है ।

।1। कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ।पृ0 17।
(2) कच्छी संतों की हिन्दी वाणी -(पृ. 16)

<u>जीवणदास</u> : ‡ई0 1696 से 1784‡

संत जीवनजी मही नदी के तट पर स्थित वीमलिया गाँव के निवासी थे । ये जाति के वैश्य थे । अखा जी की शिष्य परम्परा में ये अखा के शिष्य "लालदास" के शिष्य थे ।

"जीवन गीता" इनकी प्रमुख गुजराती रचना है । हिन्दी में रचित इनकी पद, भजन और साखियाँ उल्लेखनीय हैं । "अकल रमण" नामक कृति में कुल 364 साखियाँ हैं, जिनकी भाषा गुजराती हिन्दी है ।‡1‡ अकल रमण की भाषा शैली की परिपक्वता देखते हुए ऐसा लगता है कि यह उनकी प्रौढ़ावस्था की रचना है ।

जीवनदास ने गुरु कृपा द्वारा ऐसी सिद्धी प्राप्त कर ली थी कि बाढ़ आने पर भी जल पर चद्दी फैलाकर उस पर बैठकर अति सहजता से नदी पार कर जाते थे । "जीवन रमण" और "जीवण चातुरी" नामक रचनाओं में अपने गुरु "लालदास" के प्रति सम्मान दिखाते हुए उनकी वन्दना की है ।

जीवनदास में शिष्य बखतगिरि थे । इन्होंने अपने गुरु जीवनदास की कृति "जीवन रमणी" की प्रतिलिपि तैयार की । इसमें हरिकृष्ण महाराज की पुत्री और शिष्या रतनबाई का उल्लेख मिलता है ।

जीवणदास द्वारा रचित "अकल रमण" ग्रन्थ के अन्तर्गत 33 साखियाँ समाहित हैं । इनकी भाषा को टकसाली गुजराती कहा जा सकता है ।

इनकी भाषा अपरिमार्जित है । पण, उघाड़ी थाय तमे जेने ताहा, मला, ओलखावे जामा आदि गुजराती शब्दों की बहुलता मिलती है ।‡2‡

----

‡1‡ हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन - ‡पृ0 186‡

‡2‡ अपने पिउ की वारता कही कथी ना जाय
कहे जीवण कही क्यम सकूं, ए वात उघाड़ी थाय ।

अपने आराध्य के धाम का वर्णन करते हुए कवि साखियों में लिखते हैं :-

गगन पर गगन अगम है, ताहां नांही जीव सीव एक वेस ।
कहे"जीवणा" अटल आसन बनो, सो ही हमारा देश ।। 23

हुं तुं दोनों तां हां नहीं, नहीं अवर ब्रण लवलेस ।
कहे "जीवण" आप आप है सो ही हमारा देस ।। 26

कहीं कहीं इन्होंने इतनी सहजता से ब्रह्म विषयक भावों को अपनी साखियों में व्यक्त किया है कि इनकी भावाभिव्यक्ति की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते ।

अकल रमण की अन्तिम कुछ साखियों में जीवण ने अपनी सिद्धि लाभ का समय, फल श्रुति, मोक्ष आदि का वर्णन किया है ।

संवत् 18 सो बोतरो चउदस भादरवा वद ।
दास "जीवण" सिद्धि पामियो, वार हतो सो बुध ।।31।।

गाय सीखे सांभले अकल रमण विस्तार
कहे "जीवण" लहे शब्द अर्थ, तो तरे संसार ।।32।।

इनके द्वारा रचित सभी साखियाँ प्रकाशित हैं ।

<u>प्रीतमदास</u> : ‖1718 ई. से 1798 तक‖

प्रीतम का जन्म खेड़ा जिले के बावला गाँव में हुआ था । इनका जीवनकाल 75 से 80 वर्ष तक सीमित रहा । शोध खोजों से विदित होता है कि ये जन्मांध थे । इनकी माता जेकुँवरबा और पिता प्रतापसिंह थे । ये बारोट जाति के थे । बारह पन्द्रह वर्ष की उम्र में इन्होंने संत भाईदास जी से मंत्र लिया । इसके अतिरिक्त बापुजी से तथा गोविन्दराम से भी इन्होंने ज्ञान प्राप्त किया ।[1]

खेड़ा जिला के संदेसर गाँव को प्रीतम ने अपनी कर्मभूमि बनाया । प्रीतम मध्यकाल के लोकानुरागी, त्यागी भक्त कवि थे । यशस्वी, तपस्वी और समदृष्टिधारी संत थे । आमरण साधु जीवन व्यतीत करने वाले वेदान्ती, योग-मार्ग के अध्येता भक्त थे । अत: इनकी रचनाओं में वेदान्तज्ञान की बातें, भक्ति बोधऔर वैराग का उपदेश देखने को मिलता है ।

इनके शिष्यों में नारणदास, प्रभूदास आदि 34 शिष्य थे । संत प्रीतम अपने समय के ~~श्री~~ रवीसाहब, निरांत, निर्भयराम आदि से सत्संग एवं पत्र व्यवहार करते रहे थे ।[2]

प्रीतम ने हिन्दी गुजराती दोनों भाषाओं में रचना की है । इनके पदों का गुजरात में बड़ा आदर है । कबीर और अखा की साखी की तरह प्रीतम की साखियाँ भी चोटदार हैं । इसमें उपदेश तथा ज्ञान वैराग से संबंधित सामान्य ज्ञान का विशिष्ट महत्व है । प्रीतम ने सगुण और निर्गुण दोनों का वर्णन अपनीसाखियों में किया है । कवि ~~ने~~ कृष्णभक्त रणछोड़जी इनके आराध्य देव थे । वे कहीं उन्हें राम कहकर कहीं कृष्ण तो कहीं जानराय कहकर पुकारा है ।

‖1‖ भक्त कवि रणछोड़ एक अध्ययन - ‖पृ0 270‖

‖2‖ कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ‖पृ0 27‖

प्रीतम ने अपने साखी ग्रन्थ में साखियों को विभिन्न 24 अंगों में विभाजित किया है । प्रत्येक अंग में कम से कम 18 और अधिक से अधिक 38 साखियाँ लिखी हैं ।

इनकी वाणी में समाज के स्वस्थ्य रूप को उभारने के लिए मानव को निर्देश दिया गया है । उनको निषेधात्मक एवं खंडनात्मक अभिव्यक्ति से घृणा थी । अतः भक्ति और ज्ञान से पूर्ण प्रीतम की साखियाँ जनप्रिय हैं । इनकी साखियों में तत्वज्ञान अधिक है । इनका लक्ष्य था कि इस तत्व ज्ञान के द्वारा समाज के लोगों को सच्चा ज्ञान मार्ग दिखाना और कवि अपने इस प्रयास में सफल रहा ।

प्रीतम द्वारा रचित ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयास किया गया है ।

प्रीतम की रचनायें :

प्रीतम ने अनेक ग्रन्थों की रचना की हैं ।

1। "सरसगीता":

यह कृति लम्बी है । इसमें 406 चौपाई और बीच में दो-दो साखियों को 14 विश्राम है । इसे "भ्रमरगीत" भी कहा जा सकता है । विरहातुर गोपियाँ उद्धव द्वारा लाई गई कृष्ण के संदेश को समझाने में असमर्थ हैं अतः गोपियों द्वारा सुनाई गई कृष्ण के बाललिला को सरल तथा सरस-भाषा में सुनते हैं । इसी को आधार बनाकर "सरसगीता" की रचना की गई है । तत्व ज्ञान को सरल सरस भाषा में प्रस्तुत करने के कला प्रीतम में है । शुद्ध प्रेम शास्त्र के समक्ष अन्य सभी शास्त्र गौण है, इसे प्रीतम ने स्पष्ट किया है । प्रीतम की "सरसगीता" और दयाराम की प्रेमसरस गीता का विषय वस्तु एक परन्तु निरूपण शैली भिन्न है ।

§2§ ज्ञान कक्को :

इस रचना के अन्तर्गत कवि ने ज्ञान वैराग के उपदेश की सरिता बहाई हैं ।

§3§ सोरठ राग ना महीना :

ज्ञान वैराग और निजी बोध प्रधान सोरठ रागना गुजराती महिन एक अप्रतिम कृति है ।

§4§ ज्ञान गीत :

यह कृति गुरु शिष्य संवाद के रूप में हैं । इसमें प्रीतम ने पंचीकरण और वैशेषिक तत्वज्ञान को सरल और रोचक शैली में प्रस्तुत किया है । यह एक लघु कृति है । प्रीतम के अनुसार "थोड़ा मां घणु कहयु" ।

§5§ धरम गीता :

संस्कृत से इसे हिन्दी में लिखा गया है, भाषान्तर है । इसमें यमराज और इनके दूत के मध्य वार्तालाप को लिखा है ।

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त और भी मूल्यवान ग्रन्थ उनके नाम से उपलब्ध है :-

§6§	साखी ग्रन्थ	§9§	ब्रम्ह लीला
§7§	एकादेश	§10§	प्रेम प्रकाश
§8§	ज्ञान प्रकाश	§11§	विनयदीनता
		§12§	भगवतगीता

तथा सत्यभामा, नागरवो, गुरू महिमा, भक्त नामावली, नाम महिमा, कृष्णाष्टक, महीना, तिथि, वार, छप्पा, चौपाई, पद, धोल, आदि का विपुल संख्या में लिखने का उल्लेख मिलता है । स्व0 इच्छाराम ने प्रीतम के पदों की संख्या 1500 के आसपास बताई है ।

उनके द्वारा रचित हिन्दी रचनायें इस प्रकार है :-

‖1‖	गुरु महिमा भाग 2	‖5‖	साखी - ग्रन्थ
‖2‖	भक्त नामावली	‖6‖	विनय स्तुति की अन्तिम चौपाई
‖3‖	ज्ञान प्रकाश का पहला पद	‖7‖	विनय - दीनता
‖4‖	ब्रम्ह लीला	‖8‖	फुटकल पद
		‖9‖	सप्तश्लोकी गीता

प्रीतम ने अपने साखी ग्रंथ के रचना काल, रचना स्थान, फल-श्रुति आदि का संकेत निम्नलिखित साखियों में दिया है :-

संवत अढार चौत्री रूद्र नी, पिस्तालो आश्विन मास,
कहे प्रीतम शुक्ल पक्ष पंचमी, साखी ग्रंथ प्रकाश ।।२२।।

संदेसरसा मां सुखनिधी जनराय जुगदीश
कहे प्रीतम साखी पूरण, छसे आडतीस ।।२३।।

साखी गाये सांभड़े, राखे कदीए विचार
कहे प्रीत प्रपंच टड़े, पामे पद निरधार ।।24।।

इनकी साखियों में इन्होंने वेद, गीता आदि से उदाहरण प्रस्तुत किये हैं । डॉ0 अश्विन पटेल के अनुसार प्रीतम की साखियों की कहीं-कहीं ओज और सामर्थ्य तो दादू की साखियों जैसी है ।[1] अन्य भक्त कवियों की साखियों की तुलना में प्रीतम की साखियाँ सरल और सरस हैं । इनके मनन से एक भिन्न रस की उपलब्धि होती है । इनके उपदेश निषेधात्मक न होकर विधेयात्मक है । इनके ज्ञानभक्ति परक साखियों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि प्रीतम गुजराती साखिकारों में अग्रगण्य हैं ।

‖1‖ प्रीतम एक अध्ययन - ‖पृ0 20‖

प्रीतमदास का विशाल "साखी ग्रंथ" अंगबद्ध रूप में उपलब्ध है :-

क्र.	विषय				साखी संख्या
1	खलनु अंग	...	...	...	18
2	नाम महात्म्य नुं अंग	...	...	...	26
3	संत महात्म्य नुं अंग	...	...	...	33
4	विचार नुं अंग	...	...	...	26
5	जोगनु अंग	...	...	...	25
6	इस नु अंग	...	...	...	27
7	भक्ति नु अंग	...	...	...	26
8	प्रेम नु अंग	...	...	...	26
9	वैराग्य नु अंग	...	...	...	29
10	अनन्य नुं अंग	...	...	...	25
11	ब्रेहनु अंग	...	...	...	25
12	तृष्ण नुं अंग	...	...	...	25
13	मन नु अंग	...	...	...	28
14	स्मरण नु अंग	...	...	...	25
15	माया नु अंग	...	...	...	26
16	तत्व सांख्य नु अंग	...	...	...	25
17	ब्रम्ह स्वरूप वर्णन	...	...	...	30
18	काम नु अंग	...	...	...	34
19	जीवन मुक्त नु अंग	...	...	...	25
20	सज्जनु अंग	...	...	...	25
21	सहज नु अंग	...	...	...	24

"प्रीतम वाणी" में प्रीतम द्वारा रचित 638 उपलब्ध साखियाँ है जिनमें 400 के करीब साखियाँ हिन्दी में और 261 साखियाँ गुजराती में हैं । इनकी सभी साखियाँ प्रकाशित हैं ।

19

राजे भगत : ॥ई0 1650 - 1730 में विद्यमान॥

राजे का जन्म समय निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है । इनके द्वारा रचित ग्रन्थों के आधार पर ये प्रेमानंद के समकालीन है ऐसा कहा जा सकता है । राजे के पिता किसान थे । अपने पिता को खेती में सहायता करने के उपरान्त ये गाँव के मंदिर में संतों के समागम के लिए जाते थे । इस प्रकार इनके मन में भक्ति की भावना बचपन से जागृत हुई थी ।[1] इनके माता-पिता के बारे में तथा इनके संसारिक जीवन ॥वैवाहिक॥ और कोई वंशज के बारे में किसी प्रकार का कोई प्रमाण नहीं मिलने के कारण इनकी जीवनी के बारे में विशेष कुछ कहना मुश्किल है । रावलजी ने राजे भगत की कुछ रचनाओं के आधार पर यह अनुमान लगाया है कि इनका पिता का नाम "रणछोड़" हो सकता है ।[2] इनकी कुछ रचनाओं द्वारा यह भी निर्णय लिया जा सकता है कि कवि का जन्म मुसलमान कुल में हुआ तथा दस बारह वर्ष तक इनकी वाकशक्ति नहीं थी ।[3] इस कवि की मृत्यु का समय निश्चित नहीं है परन्तु कुछ एक रचनाओं द्वारा इसका अनुमान लगाया जा सकता है । इनकी रचनाओं को देखकर ऐसा लगता है कि इनका जीवन कम से कम साठ सत्तर वर्ष तक का हो सकता है । ब्रेहेगीता ॥ई0 1171॥ में समाप्त हुई, इसके बाद कम से कम पन्द्रह साल तक जीवित रहे होंगे । अत: इनके मृत्यु का समय ई0स0 18 वी0 श0 के पूर्वार्द्ध के पहले माना जा सकता है ।[4] राजे के जीवन काल में भरूच में नवाबी शासन था । भरूच के नवाब का अन्त और अंग्रेजों के शासन का आरम्भ इनके समय में हुआ । अत: अनुमानत: इनका काल निर्णय किया जा सकता है ।

॥1॥ भक्त कवि राजे कृत काव्य संग्रह - ॥पृ0 18॥

॥2॥ भक्त कवि राजे कृत काव्य संग्रह - ॥पृ0 19॥

॥3॥ भक्त कवि राजे कृत काव्य संग्रह - ॥पृ0 20॥

॥4॥ राजे भगत कृत काव्य संग्रह - ॥पृ0 23॥

राजे भगत एक सच्चे "वैष्णव भक्त" थे । इस कृष्ण भक्त ने अपने इष्ट देवता के भजन - पूजन तथा ज्ञान वैराग और प्रभुप्रेम युक्त काव्यों की रचनायें करने में अपना जीवन व्यतीत किया । इनके द्वारा विपुल साहित्य का सृजन किया गया जिसके अन्तर्गत् 6,000 के आस-पास पद, 3778 साखियाँ मिलती हैं । ग्रन्थ के पिछले पृष्ठ फट जाने के कारण लगता है साखियों की संख्या का निश्चित अनुमान लगाना कठिन है । शायद साखियों की संख्या इससे भी अधिक थी । इनकी साखियाँ "गुजरात विद्या सभा" से प्राप्त ग्रंथ ﴾गु0 - 750﴿ में मिलती हैं । इनकी भाषा, सत्रहवीं - अठारहवीं शताब्दी के अखा, प्रेमानंद और शामल के समकक्ष है ।

नरसिंह, मीरा और दयाराम की तरह राजे ने भी गोपीभाव से पूर्ण भक्ति के अनेक पदों और साखियों की भावभीनि रचना की है । गोपियों के "प्रेमभाव" को निरूपित करती इनकी हिन्दी साखियाँ, हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है । सादी और सरल हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में रचित इनकी साखियाँ मध्यकाल की उत्तमोत्तम कृति है । राजे भगत द्वारा रचित "राधिका विवाह", प्रकाशगीत्ता, सत सिखामण, रुक्मणिहरण आदि मूल्यवान ग्रन्थ हैं । गुजरात विद्या सभा के 750 वें हस्तलिखित ग्रंथ के आरम्भ के और अन्त के 20 कड़ुवे फट गये हैं । जिससे प्रकाश गीता के 20 कड़ुवे नहीं हैं । अत: आरम्भ के 20 कडवे फार्वस ﴾ 66 से लिया गया है । "वारमासी", बाललीला, मनसमो आदि उनकी दीर्घ कृतियाँ हैं । उनकी दीर्घ काव्य कृति ब्रह्म गीता गुजराती साहित्य की अमूल्य निधि है ।

राजे द्वारा रचित पौने चार हजार हिन्दी साखियों में से कुछ विशेष साखियों को चुनकर रमेश जानी ने उनका सम्पादन "राजे कृत संग्रह" में किया है । इसमें कवि ने भक्ति और उपदेश के निम्नलिखित विभिन्न पहलुओं को दर्शाया है ।
हरि में श्रद्धा, गुरु महिमा, हरि प्रेम, भक्ति की महिमा, अज्ञानी और प्रमादी लोगों को उपदेश, हरिजन के लक्षण भक्ति, शरणागति, गोपियों की और ब्रज की महिमा आदि को अपनी साखियों का मूल विषय बनाया है । "प्रकाश गीता" और "सत शिखामण" की तरह ये केवल उपदेशात्मक नहीं है । इसमें एक संत भक्त की उत्कृष्ठ लेखन कला का स्पष्ट आभाव होता है । इनकी 152 साखियाँ शुभ ब्रज भाषा में प्रकाशित है । कहीं कहीं गुजराती भाषा का भी प्रयोग कवि ने अपनी साखियों में किया है ।

<u>रत्नो भावसार</u> : ई. 1739 में विद्यमान

गुजराती साहित्य में मध्यकालीन कृष्ण भक्त कवि के रूप में स्थान प्राप्त रत्नों के जीवनवृत्त सम्बन्धी पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं होती है । ये खेड़ा जिले के निवासी और जाति के भावसार थे । इनकी कृतियों से इनके जीवन सम्बन्धि इतने ही तथ्य प्राप्त होते हैं ।[1]

इनकी दो रचनायें "महिना" उद्धव जी के बारहमास और "दाणलीला" गुजराती भक्ति साहित्य में प्रसिद्ध हैं । राधा-गोपी कृष्ण विषयक विरह श्रृंगार की अभिव्यक्ति हेतु अनेक मध्यकालीन कवियों ने बारहमासा काव्य लिखें । इनमें रत्नो द्वारा रचित "बार-मास" काव्य उत्तमोत्तम माना जाता है । इसमें प्रत्येक मास में कृष्ण विरह से संतप्त गोपियों की दीन-दशा का चित्रण कवि ने हृदय स्पर्शिता तथा भावोद्रेकता से किया है । प्रत्येक ऋतु के विशिष्टता सम्पन्न प्रकृति चित्रण के द्वारा राधा कृष्ण के मनोभावों का चित्रण करके कवि ने मानों अपने भक्त हृदय को उन्मोचित किया है ।

"रत्नो सचमुच रत्न था" कहकर कवि नानालाल ने रत्नों की प्रशंसा की है ।

कवि द्वारा रचित सैकड़ों साखियाँ है परन्तु हमें केवल 60 के आसपास ही साखियाँ उपलब्ध हुई हैं । कुछ साखियाँ प्रकाशित हैं । इनकी भाषा ब्रजभाषा मिश्रित गुजराती है ।

---

1. राधाकृष्ण भक्त कोश - पृ0 594

भक्त कवि गुलाबदास : ﴾इ 17 वी शताब्दी के कवि﴿

कबीरपंथी महात्मा कृष्णदास सुरत के थे । गुलाबदास उनके शिष्य थे । राणा जाति में जन्म लेकर इस भक्त ने गृह त्याग किया और संत के चरणों में आश्रय ग्रहण किया । इसके बाद वे तिर्थाटन को निकल गए । लम्बी कालावधि के बाद संत के निवास स्थान पर आकर रहे और भजनानंद में काल निर्गमन किया । उनका समय 250 वर्ष पूर्व है । ऐसा अनुमान किया गया है ।

इनकी साखियों की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है । कहीं कहीं गुजराती का प्रभाव दिखाई देता है । अपनी साखियों में गुलाबदासजी ने गुरु को अधिक महत्व दिया है । गुरु की महानता को दर्शाते हुए उन्होंने लिखा हैं कि -

एक आशा गुरू देवकी, दुजी आशा निराशा,
साहिब तुम्हारे चरण में, गुलाब को विश्वास ।

कबीर पंथी होने के कारण इनकी रचनाओं में "साहब" शब्द का विपुल प्रयोग देखने को मिलता है तथा कबीर ही परमात्मा है इनका प्रमाण भी मिलता हैं ।

रचनाएँ -

इन्होंने अनेक फुटकल रचनाएँ की हैं । इनके द्वारा विपुल परिमाण में साखियाँ लिखी गई है जो सरल, शुद्ध और अध्यात्मभाव से पूर्ण होने के कारण शिक्षाप्रद हैं । सामाजिक कुप्रथा का निवारण, नारी निंदा, संत भाव का प्रचार, कुकर्म का फल, ध्यान आदि का महत्व भगवत भाजन आदि की भावना को प्रधानता देने के कारण इनकी साखियाँ समाज में प्रशंसा की पात्र बनी । गुरु को प्रधानता देने के कारण इनके शिष्यों की संख्या बढ़ने लगी । जब इनके शिष्य इनके गुरू भक्ति को देखते तो उनको साक्षात् ब्रह्म का दर्शन उनको अपने गुरू में होता था । अत: संत की साखियों का गान घर-घर में होने लगा ।

इनके द्वारा रचित 20 हिन्दी साखियाँ उपलब्ध हुई हैं । इनकी साखियाँ अप्रकाशित है ।

<u>रवि साहब</u> : ॥ई०स० 1727 से ई०स० 1804॥

रवि साहब का जन्म तणछा में ई०स० 1727 में हुआ था । इनके पिता मंछाराम तथा माता इच्छाबाई, कृष्णोपासक थे । रवजी, रविदास, रविराम, रविसाहब आदि इनके अनेक नाम उपलब्ध है । रविराम का मन वैष्णव भक्ति में नहीं लगा और उन्होंने कच्छ के संत भाण साहब को अपना गुरु बनाया । भाण साहब के 40 शिष्य थे रविदास इस शिष्य मंडली के प्रमुख संत बन गये ।[1] रवि साहब, केवल कच्छ में ही नहीं सारे सौराष्ट्र में भी उनकी वाणी का प्रचार है । रवि साहब के जीवन संबंधी जानकारी "भाण चरित्र" संत चरित्र प्रकाश, रवि राम चरित्रामृत आदि रचनाओं में उपलब्ध है ।

रवि साहब के शिष्यों में मोरार साहब, गंग साहब, लाल साहब, राम स्वामी, केशव स्वामी, मौनीराम, जोरीराम, स्थाल तथा हुलनदास आदि प्रमुख है ।[2] मुस्लिम, चारण, हरिजन भील जैसी विविध जातियों के कई लोग रवि-भाण सम्प्रदाय में दीक्षित हुए थे । इस सम्प्रदाय में कट्टर साम्प्रदायिकता का कोई स्थान नहीं था ।[3] कादरशाह जैसे भयंकर लुटेरे को उपदेश देकर संत बनाया था । इन्होंने संत वाणी की रचना की ।

<u>रचनाएँ</u> -

रवि साहब ने हिन्दी तथा गुजराती दोनों भाषाओं में अनेक ग्रंथों की रचना की है - "चिन्तामणि", "भाण गीता", "मन संयम" आदि उल्लेखनीय है ।

॥1॥ कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ॥पृ० 26॥

॥2॥ कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ॥पृ० 26॥

॥3॥ कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ॥पृ० 27॥

भाण गीता में 21 कड़वे के अन्तर्गत उन्होंने "बस विलास" का वर्णन किया है । इस ग्रंथ की भाषा यों तो गुजराती है, किन्तु अत्र-तत्र उन्होंने हिन्दी साखियों का भी प्रयोग किया है ।[1] रविसाहब की वाणी सगुण - निर्गुण का झगड़ा न उपस्थित करके समन्वयवादी के दृष्टिकोण को महत्त्व प्रदान करती है ।

"मन संयम" - में उन्होंने साधना पथ में आत्म संयम का महत्त्व सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है ।

"भाण प्रश्नोत्तरी" - इसमें ब्रम्ह साधना विषयक बहुमूल्य बोध संचित है ।

"गुरू महात्म" - इस रचना में रवि साहब ने अपने गुरू भाण साहब की महानता अंकित की है ।

"गुरू महिमा" - इस ग्रन्थ में 66 चौपाइयों तथा 21 साखियों का समावेश है । यह ग्रन्थ छोटा है परन्तु मूल्यवान है ।

"विमल संत वाणी" - इस ग्रन्थ में कवि ने संतों की महिमा का गुणगान किया है ।

<u>साखियाँ</u> -

रवि साहब ने लगभग ढाई हजार साखियों की रचना की है जो विभिन्न 69 अंगों में विषयानुरूप विभाजित है ।[2] इनकी साखियों में अध्यात्मिकता के साथ-साथ सामाजिकता का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है । यह एक विशाल ग्रन्थ है ।

----

(1) कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 28)

(2) कबीर परम्परा - (पृ0 131)

फुटकल रचनायें -

इनके फुटकल पदों में ताल - लय और संगीतात्मकता का प्राधान्य है ।

रवि साहब की वाणी कबीर - वाणी की परम्परा में लिखी गई है । रवि साहब पर कबीर साहब की वाणी तथा विचारधारा का प्रभाव परिलक्षित होता है । रवि साहब की वाणी हृदय वेधक वजनदार और मर्मस्पर्शी है ।[1] इनकी वाणी में दर्द और प्रेम की जमुना गंगा बहती है जिनमें जीवन बोध और आत्मानुभव की धाराएँ मुख्य हैं । वैराग्यबोध, मस्ती, फक्कड़पन, प्रेममय भक्ति, गुरू महिमा एवं आध्यात्मिक अनुभूतियों को ही अपनी वाणी का प्रमुख आधार माना है ।

शब्दातीत-वर्णनातीत ब्रह्म को इन्होंने लोक योग्य शैली में प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया है । इनकी साखियों में अलंकार योजना इतनी सुन्दर रूप से की गई है कि ज्ञान वर्धक साखियाँ रस वर्धक हो गई है । इनकी रचनाओं में जहाँ एक ओर पनिहारी, दीया, बाल्य, प्रेमलहर आदि शब्दों के प्रयोग द्वारा मधुर भावों की अभिव्यक्ति हुई है, वहाँ दूसरी ओर अकथ कहानी, अणलिंगी, अनभैरतुमारी, अलखनिरंजन आदि संत साहित्य की पारिभाषिक शब्दावली के द्वारा गूढ़ ब्रह्मज्ञान की भी अभिव्यक्ति हुई है ।[2]

---

(1) कच्छ ना संतो - दुलराय काराणी - (पृ० 144)

(2) कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - (पृ० 29)

0

क्रम सं0	अंगों के नाम		साखियों की संख्या
1.	गुरु देव को अंग	.. .. ..	234
2.	अथ श्री सुक्ष्म शीखामण को अंग	.. .. ..	127
3.	अथ श्री गुरु सिमुख को अंग	.. .. ..	28
4.	अथ गुरु पारख को अंग	.. .. ..	5
5.	अथ नाम विश्चे को अंग	.. .. ..	20
6.	अथ ब्रेह को अंग	.. .. ..	49
7.	अथ श्री रचना को अंग	.. .. ..	40
8.	अथ हरदा को अंग	.. .. ..	11
9.	अथ नाभि को अंग	.. .. ..	38
10.	अथ अजंपा को अंग	.. .. ..	24
11.	अथ श्री कमल को अंग	.. .. ..	13
12.	अथ श्री नारि को अंग	.. .. ..	69
13.	अथ श्री मन वैराग को अंग	.. .. ..	30
14.	अथ तन वैराग को अंग	.. .. ..	62
15.	अथ श्री स्मरण को अंग	.. .. ..	67
16.	अथ काल को अंग	.. .. ..	70
17.	अथ श्री संत को अंग	.. .. ..	49
18.	अथ श्री असाधु को अंग	.. .. ..	59
19.	अथ श्री दास को अंग	.. .. ..	83
20.	अथ श्री सजन प्रीतम मिश्र को अंग	.. ..	83
21.	अथ भक्ति को अंग	.. .. ..	71
22.	अथ श्री निरपक्ष को अंग	.. .. ..	51
23.	अथ श्री पक्ष को अंग	.. .. ..	40
24.	अथ पतिव्रता को अंग	.. .. ..	21
25.	अथ श्री शब्द को अंग	.. .. ..	24

क्रम सं0	अंगों के नाम	साखियों की संख्या
26.	अथ श्री मन को अंग	50
27.	अथ श्री विचार को अंग	40
28.	अथ पंच मुद्रा को अंग	53
29.	अथ श्री प्रेम को अंग	39
30.	अथ श्री जरा जोवन मिश्रित को अंग	51
31.	अथ श्री नाम महातम को अंग	26
32.	अथ श्री विश्वास को अंग	43
33.	अथ श्री विनती को अंग	37
34.	अथ श्री आप खेल को अंग	10
35.	अथ श्री छोत को अंग	5
36.	अथ श्री साकुत को अंग	22
37.	अथ श्री काम को अंग	31
38.	अथ श्री हीरा को अंग	37
39.	अथ श्री हंस को अंग	26
40.	अथ जीव दया को अंग	22
41.	अथ श्री माया को अंग	26
42.	अथ श्री शामील को अंग	26
43.	अथ श्री रूप को अंग	15
44.	अथ श्री प्राण पहले को अंग	17
45.	अथ श्री क्षमा को अंग	11
46.	अथ श्री जरणा को अंग	9
47.	अथ श्री शील को अंग	13
48.	अथ श्री संतोष को अंग	6
49.	अथ श्री धीरज को अंग	7
50.	अथ श्री तपस्या को अंग	13
51.	अथ श्री दान को अंग	12

क्रम सं0	अंगो के नाम		साखियों की संख्या
52.	अथ श्री सुगरा को अंग	.. .. ..	9
53.	अथ श्री नुगरा को अंग	.. .. ..	8
54.	अथ श्री टैक को अंग	.. .. ..	6
55.	अथ श्री हिंसा को अंग	.. .. ..	6
56.	अथ श्री अहिंसा को अंग	.. .. ..	7
57.	अथ श्री दया को अंग	.. .. ..	14
58.	अथ श्री नींदा को अंग	.. .. ..	20
59.	अथ श्री वाद को अंग	.. .. ..	5
60.	अथ श्री सुरा को अंग	.. .. ..	10
61.	अथ श्री व्याज को अंग	.. .. ..	40
62.	अथ श्री मतलब को अंग	.. .. ..	26
63.	अथ श्री सलुकवीन मलुक को अंग	.. .. ..	26
64.	अथ श्री महावत को अंग	.. .. ..	36
65.	अथ श्री प्राताव को अंग	.. .. ..	71
66.	अथ श्री भसुचक को अंग	.. .. ..	37
67.	अथ श्री आचार को अंग	.. .. ..	39
68.	अथ श्री रामभक्त को अंग	.. .. ..	25
69.	अथ श्री शीखामण को अंग	.. .. ..	24

विभिन्न अंगों में विभक्त 2420 के करीब साखियाँ उपलब्ध हैं इनमें से 500 के करीब साखियाँ गुजराती में है तथा 1920 के करीब साखियाँ हिन्दी में है इनकी सभी साखियाँ प्रकाशित हैं ।

<u>निरांत</u> : (ई0स0 1747 से ई0स0 1828)

निरांत का समय (1747 ई0 से 1828 ई0) है । श्री निरांत महाराज निरांत सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं । निरांत सम्प्रदाय एक ज्ञानोपासक सम्प्रदाय है । निरांत महाराज का जन्म वड़ोदरा के करजन तालुका के अन्तर्गत देथाण गाँव में हुआ था । इनके पिता का नाम उमेदसिंह तथा माता का नाम हेताबा था । इनकी शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई । बचपन से ही इनको भक्तिपरक कथाओं तथा भजनों में रूचि थी ।

निरांत ने दो विवाह किए जिनसे 12 संतानें थी ।

निरांत के शिष्यों की संख्या पूर्व में डभोई से रेवातट, पश्चिम में कावी से दहेज, भाड़भूत और मूवा तक उत्तर में महिसागर से लेकर दक्षिण में सूरत तक फैल गई । कहा जाता है कि स्वामिनारायण सम्प्रदाय के प्रवर्तक सहजानंद स्वामी और निरांत के बीच शास्त्रार्थ हुआ परन्तु दोनों शान्त चित्त होने के कारण कोई परिणाम नहीं निकला । इनके समकालिनों में प्रीतमदास, सहजानंद और कुबेरदास थे ।

निरांत के सोलह शिष्यों ने इनकी माला तथा चरण पादुका लेकर अपने घरों में गुरू गद्दी की स्थापना की ।

<u>रचनाएँ</u> -

इन्होंने अपनी रचनाओं में शान्त रस का व्यवहार अधिक किया है । योग को अधिक महत्त्व देने के कारण यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान आदि से संबंधित अनेक पदों की रचना की है ।

इन्होंने झूलणा, कविता, कुडलियाँ तथा रेखता छन्दों में अनेक हिन्दी पदों की भी रचना की है ।

संगीत प्रेमी होने के कारण, धौल, गरबा, गरबी, होरी, केदारो आदि विभिन्न राग-रागनियों में इनकी रचनाएँ उपलब्ध हैं ।

निरांत ने 14 महत्वपूर्ण साखियों से अपने काव्य का आरम्भ किया है । पहली साखी में गुरू की चरण वंदना की है । उन्होंने गुरू को सर्वोपरि माना है क्योंकि उनके मार्गदर्शन के बिना हरि का मिलना असम्भव है ।

निरांत द्वारा रचित फुटकल 14 महत्वपूर्ण साखियाँ शुद्ध गुजराती भाषा में उपलब्ध हैं जो प्रकाशित भी है ।

निरांत की 54 महत्वपूर्ण हिन्दी साखियाँ हमें फुटकल रूप में उपलब्ध हुई हैं । 54 साखियाँ दो अंगों में लिखी गई हैं :-

1।	गुरू को अंग	.. .. ..	45
2।	नाम को अंग	.. .. ..	9 [1]

ये एक अनुभवी कोटि के संत थे । एक ध्यान से "सोऽहं" मंत्र का जाप किया करते थे तथा सबको नाम महिमा का ही उपदेश दिया करते थे । साखियों में इनकी नाम-निष्ठा स्पष्टतया व्यक्त हुई है । अवतारवाद का खण्डन कर इन्होंने कहा है कि एक ही ब्रह्म को जानने से मुक्ति मिलेगी । वस्तुतः ये नाम-महिमा के गायक ब्रह्म ज्ञानी कवि थे -

नाम निरंजन से अधिक, नाम एक निज नाम [2]
सब घट में व्यापी रहे, नाम निरंजन ठाम ।। 10

---

[1] गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - पृ0 217

[2] निरांत काव्य - पृ0 2

गबरी बाई : ई०स० 1759 से 1809 तक

गबरीबाई मूल डूंगरपूर राजस्थान की वड़नगरा नागर थी । इनके माता पिता का नाम अविदित है । इनकी एक बहिन थी जिसका नाम चंपु था । अल्प आयु में विधवा होने के कारण इनका मन संसार से उचट गया । पढ़ लिखकर गबरीबाई ज्ञानी और यशस्वी बन गई । इनके ज्ञान से प्रभावित होकर राजा शिवसिंह ने इनके लिए एक मंदिर बना दिया ।[1]

उत्तरावस्था इन्होंने काशी में व्यतीत की । कुछ समय इन्होंने मथुरा और वृन्दावन में सत्संग और भगवत भजन में बिताया । 1809 ई० में इन्होंने स्वेच्छा से समाधि लगाकर देहत्याग किया ।

गबरीबाई योगाभ्यासी और आत्मज्ञानी थी । अत: इनके पदों में योग, वैराग तथा ब्रम्हज्ञान का निरूपण अधिक है । इनकी साधना का प्रथम सोपान सगुण परक है जबकि पर्यवसान निर्गुण भक्ति में हुआ । के०का० शास्त्री ने इन्हें गुजरात की ज्ञानाप्रयी कविता लिखने वाली कवयित्रियों में सर्व प्रथम माना हैं ।[2]

गबरी के अनुसार चित्तशुद्धि, आत्म संयम, सत्संग, ध्यान, नाम जप आदि सोपानों के द्वारा ही परम ध्य की प्राप्ति हो सकती है । इनकी वाणी में अनेक रागों का समावेश देखा जा सकता है । रागललित, राग खयामणी, राग पूरबी, राग रेखतो, राग काफी आदि में इनकी वाणी उपलब्ध है । उनके द्वारा रचित तिथियाँ, वार तथा अनेक पदों में शरीर और आत्म ब्रम्ह और जीव, मन और माया का अभूतपूर्व समावेश मिलता है ।

---

1. गुजरात में संतो की हिन्दी साहित्य को देन - पृ० 171
2. गुजरात में संतो की हिन्दी साहित्य को देन - पृ० 172

इन्होंने हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में रचनाएँ की हैं । "गबरी कीर्तन माला" में इनकी अमूल्य कृति समाहित है । इन्होंने अनेक साखियों की रचना की है । इनकी साखियाँ सारगर्भित और विभिन्न अंगों में विभाजित हैं । चित्त चेतन, हिरदा शुद्धि, सतगुरू कृपा मिथ्याचारण आदि अंगों की साखियाँ हमें सत पथ पर अग्रसर होने की तथा निष्ठावान होकर गुरू-ब्रम्ह में अटूट श्रद्धा रखने के लिए उत्साहित करती है ।

इनके द्वारा रचित 26 साखियाँ उपलब्ध हैं । जिनकी भाषा हिन्दी है । ये साखियाँ प्रकाशित है ।

क्रमांक	अंग				साखियों की संख्या
1.	चित्त चेतन को अंग	..	..	..	5
2.	सतगुरू कृपा को अंग	..	..	..	5
3.	हिरदा शुद्धि को अंग	..	..	..	5
4.	मिथ्या आचरण को अंग	..	..	..	6
5.	गोविन्द प्राप्ति को अंग	..	..	..	5

गबरी बाई अनेक भाषाओं की ज्ञाता थी । इनके पद हिन्दी, गुजराती, तथा राजस्थानी दोनों भाषाओं में मिलते हैं । निर्गुण के साथ-साथ इन्होंने सगुणभक्ति के पदों की रचना भी की है । इनकी साधना का प्रथम सोपान सगुण परक है जबकि पर्यवसान निर्गुणभक्ति में हुआ है । "अखेगीता" की झांकी तथा पदों की झलक गबरीबाई के पदों में हमें प्रत्यक्ष स्पष्ट दिखाई देती है । इनकी भाषा संत टकसाल की मिली-जुली भाषा सधुक्कड़ी हिन्दी है ।

कुबेरदास (करूणासागर) (ई0 1773 से 1878)

कुबेरदास का जन्म खेड़ा जिला के कासोट और अजरपरा के बीच "सेट" नामक तलाब के पास हुआ था। सिसोदिया क्षत्रिय वंश के किसी व्यक्ति ने इन्हें अपने घर ले जाकर इनका पालन-पोषण किया। ये सारसा में "कुबेर पंथ" के प्रवर्तक थे। इन्होंने ज्ञान - सम्प्रदाय की स्थापना करके ज्ञानोपदेश देने का कार्य किया था।

इनके शिष्या में स्त्री-पुरूष दोनों का समावेश होता था। सारसा गाँव की अचरज बा इनकी परम विदूषी शिष्या थी। इन्होंने "अचरज सागर" नामक प्रबन्ध ग्रन्थ की हिन्दी में रचना की है। नारायणदास भी इनके प्रमुख शिष्य थे जिन्होंने "सिद्धान्त बावनी" नामक ग्रन्थ की हिन्दी में रचना की है। इन दोनों शिष्यों ने अपने ग्रन्थ में अपने गुरू करूणा सागर के सिद्धान्तों का वर्णन निरूपण किया है। अन्य शिष्यों में नेमीदास, सुखानंद और छोटय आदि भी है। कहा जाता है संत छोटय करूणा सागर के ग्रन्थों की प्रतिलिपि करते करते एक दिन स्वयं महात्मा बन गये।[1]

कुबेरदास ने आध्यात्मिक ज्ञान से भरपूर छोटे-बड़े 18 ग्रन्थों की रचना की है। यहाँ उनके कुछ एक ग्रन्थों की चर्चा करने का प्रयास किया गया है।

(1) सुकृत चिंतामणि :

इस ग्रन्थ में परब्रम्ह विषयक विविध दृष्टान्तों का निरूपण है। यह कुबेरदास की एक महत्वपूर्ण रचना है। इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम संसार की उत्पत्ति तथा अन्त में आचार विषयक बोधपूर्ण पदों की रचना की है।

---

(1) गुजरात के संतो की हिन्दी साहित्य को देन - (पृ0 181)

§2§ <u>स्वचार पत्रिका</u> :

छः अंगों में विभक्त स्वचार पत्रिका में कवि ने सम्प्रदाय के साधू-संत, महन्त और हरिजनों के आचार-नियमों को प्रतिपादित किया हैं ।

§3§ <u>हंस तालेब</u> :

इसका दूसरा नाम "ज्ञान गीता" भी है । जो 52 अंगों में विभक्त एक बृहद् रचना है । इस ग्रन्थ की रचना साखी एवं रेखता ~~छ~~ छंदों में की गई है । विषय की दृष्टि से इसके अन्तर्गत हिन्दू-मुसलमान दोनों पक्षों के रस्म-रिवाजों की चर्चा करते हुए कवि ने बाहयाचारों की व्यर्थता सूचित की है । राम और रहिम दोनों की एकता का बोध कराते हुए कवि ने इन दोनों से परे "अपने" "निहग भैरव" की चर्चा की है । इनके अतिरिक्त कवि ने -

§4§	विज्ञान सक्रम मणिदिप,	§5§	विश्वभ्रम विध्वंस
§6§	अगाध गति,	§7§	अद्वैत-द्वैत नखेंद चिन्तामणि,
§8§	विश्व बोध चौसरा,	§9§	ज्ञान भक्ति विराग निरूपण
§10§	तिथिग्रन्थ ज्ञान शिरोमणि	§11§	शिक्षापत्री,
§12§	भवतिमिर भास्कर,	§13§	पंचम स्वसमवेद,
§14§	परम सिद्धांत प्रणव कल्पतरू	§15§	कैवल प्रकाश
§16§	गुरू महिमा,	§17§	अगाध बोध
§18§	भज़न - भजन उपासना विधि		

"अगाध बोध" रचना के 40 वें अंग में कवि ने अपने आगमन के रहस्य को स्पष्ट करके कहा है कि अखंड परचों का बोध कराने के लिए कैवल धनी के आदेशानुसार इस भव में जीवों के उद्धार हेतु आये हैं।

(1) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ. 283).

केवल धनी के आदेशानुसार इस धाम में जीवन के उद्धार हेतु आये हैं । [1] इनकी फुटकल रचनाओं में रेखता, कक्का, तिथि, साखियाँ, गरबी, रवेणी, मंगल प्रभात तथा अविनाशी पद, महापद, केरापद आदि शीर्षकों में विभक्त विभिन्न पद उपलब्ध हैं ।

इन्होंने हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में रचनायें की हैं । इनकी साखियाँ बोधप्रद और भगवत दर्शन से पूर्ण हैं । इनकी साखियों में कहीं कहीं गुजराती का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है ।

इनके द्वारा रचित 24 साखियाँ उपलब्ध है जिनकी भाषा हिन्दी है । ये साखियाँ प्रकाशित हैं ।

----

[1] गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - [पृ0 283]

45

अनवर खान : ई0स0 1765 से 1821 तक

अनवरखान एक मुसलमान फकीर थे । सूरत के नवाब निजामुद्दीन के रिश्तेदार थे । नवाब साहब के रिश्तेदार होने के कारण भी इनका मन राजकार्य में अधिक न लगा । फकिरों के धर्मग्रंथों को सुनने के कारण इनको कैद की सजा दी गई । इस समय संत कंवलदासजी ने इनको कैद में से छुटकारा दिलाया और इनको धर्म संबंधी ज्ञान दिया ।[1] ब्राम्हण कवि दुलाराम जी इनके अनन्य मित्र थे । शायर बंसीलाल से इनके घनिष्ट संबंध थे । ब्राम्हण कवि दुलाराम ने इनकी प्रशंस्ति में अनेक रचनायें की । इनकी सात्विक भावों से प्रभावित होकर इनके अनेक शिष्य बन गये । इनके शिष्यों की संख्या अधिक होने के कारण इन्होंने अनेक टोलियों में इनको विभाजित कर दिया इस प्रकार इनकी चेलों की संख्या में वृद्धि होने पर भी एक शिष्टता का वातावरण इनके आश्रम में सर्वदा प्रवर्तमान रहता था । इन्होंने सदगुरु कंवलदासजी के आश्रम जाकर देहत्याग किया । आज भी इनकी रचनायें समाज के भटके हुए मनुष्य को पथ प्रदर्शित करती है ।

अनवर खान द्वारा रचित कुंडलियाँ, पद साखियाँ उपलब्ध हैं ।

इनके द्वारा रचित 10 साखियाँ हिन्दी में उपलब्ध हैं । इनकी साखियाँ अप्रकाशित हैं ।

---

1 माणेक लाला से उपलब्ध हस्तप्रत से

<u>निर्मलदासजी</u> : ‖ई॰स॰ 1766 से 1879‖

निर्मलदासजी का जन्म अवधपुरी के शुक्ल ब्राम्हण कुल में हुआ था । इनके पिता का नाम पार्वतीबाई था । इनका मूल नाम तो अमराव शुक्ल था परन्तु साधु होने के बाद इनको "निर्मलदास" के नाम से पुकारा जाने लगा । कहा जाता है पवित्र ब्राम्हण कुल में जन्म के बावजूद भी इन्होंने लूट-मार का धंधा अपनाया था ।[1] इनके डर से लखनऊ के नवाब भी भयभीत रहते थे । इनके एक मित्र की दर्दनाक मौत इनकी आँखों के सामने हुई तथा उस मित्र की पत्नी अति अल्पावस्था में सती हो गई । इस घटना से अमराव का हृदय परिवर्तन हो गया । उसे इस संसार से विरक्ति हो गई । शान्ति की खोज में अमराव श्मशान में जाकर बस गये ।

कुछ समय पश्चात् सरयु नदी के किनारे आश्रम में स्थित महंत - बाबा ओद्धवदासजी का शिष्यत्व ग्रहण करने के लिए आतुर हुए ।[2] महंत द्वारा प्रताड़ित होकर अमराव उत्तरखंड के महामृत्युंजय नामक पर्वत पर जाकर एक गुफा में बैठकर ईश्वर का ध्यान करने लगे ।

बारह वर्ष की कठोर तपस्या के पश्चात् इष्टदेव का आशिर्वाद प्राप्त हुआ और उनके आदेश से अमराव ने तपस्य भंग की । उनके हृदय में प्रेम का सागर हिल्लोले लेने लगा ।[3] पर्वत से उतर निर्मलदास पुन: ओद्धवदास के पास गये । अपने शिष्य को ब्रह्मेश्वरी संत के रूप में पहचान नहीं सके । उनके शब्दप्रहार ने एक लुटेरे को महान संत बना दिया । गुरू ने उन्हें "निर्मलदास" नाम से अभिहित

‖1‖ संत कवि निर्मलदास - ‖पृ0 9‖

‖2‖ संत कवि निर्मलदास - ‖पृ0 28‖

‖3‖ संत कवि निर्मलदास - ‖पृ0 32‖

किया । "निर्मल हुआ तुभी निर्मलदासा, सद्गुरू बेन उचारा" [1] तत्पश्चात् सद्गुरू के आदेश से निर्मलदासजी तिर्थाटन को निकले वहाँ से निर्मलदास बद्रीकेदार गये ।

निर्मलदासजी के समय में मुगल सम्राट औरंगजेब का शासन था । धर्माँध बादशाह विश्वनाथ के मंदिर को तोड़ने के पश्चात् केदारेश्वर के मंदिर को ध्वंस करने के लिए अग्रसर हुआ । परन्तु संत महात्मा के प्रताप से उनके हृदय में पश्चाताप की भावना जागी और मंदिर की क्षति किए बिना वह लौट गया । इस प्रकार की अनेक दंत कथाएँ संत महात्मा के जीवन से युक्त हैं । वहाँ से निर्मलदास मानसरोवर गये और साथ ही साथ अमरनाथ का भी दर्शन किया, फिर पशुपतिनाथ का दर्शन करके मोक्षधाम काशी आये ।

"संत समागम काशी नग्र सुखदाये" [2]

ब्रजभूमि में आकर निर्मलदास ने मीरा के भजन और पदों से ईश्वरानुभूति का आनन्द उठाया । निर्मलदासजी रामेश्वर होकर गुजरात आये । संत जिस स्थान में निवास करते थे दांडीवल्ला स्थान के विषय में उनके प्रिय शिष्य जमनादास ने एक लावणी में उसका सुन्दर उल्लेख किया है ।

ई०स० 1836 में संत निर्मलदास सुरत शहर में निवास हेतु पधारे । इनके आश्रम के निकट ही अहिरों की बस्ती थी उस बस्ती में रहनेवाला एक अहिर उनका भक्त बन गया तथा विशेष कृपा का पात्र बन गया और गृहत्याग कर आश्रम में रहने लगा । मस्त भजनिक-सदगुरू के चरणों में बैठकर नेमदास भी भजनानन्दी बन गया और गुरू के आशिर्वाद से भजन, पदों और साखियों की

----

(1) संत निर्मलदास - (पृ० 46)

(2) संत निर्मलदास - (पृ० 178)

रचना करने लगा । गुरु की बखान करते हुए नेमदास कहते हैं -

"नेमको पर मोध के, पारस किये गुरु आय" [1]

निर्मलदास के शिष्यों की संख्या हजारों मेंहैं । परन्तु कुछ मुख्य शिष्यों के नाम इस प्रकार हैं - सदभागी सौना, तारांगना, कजरी, वारांगना तिलका को पापकर्म से निर्मलदासजी ने मुक्त किया तथा ईश्वरोन्मुख किया और ये निर्मलदास के शिष्य बन गये । भक्त कवि - घासीदास, गायिका शमरू बेगम, जादूगर मोहनसिंह, भक्त कवि बिजलदास, भक्त कवि जगजीवनदास, भक्त कवि परभुदास, संत द्वारका दासजी, शायद बहादुरसिंह, शायर हरिलाल आदि इनके प्रमुख शिष्य थे ।

निर्मलदास के समय संतों के अनेक समागम हुए थे । ब्रे शेडखी के संतधाम में रवि साहब विराजमान थे । निर्मलदासजी वहाँ गये और रवि साहब के साथ सत्संग किया । कवि की साखी में इस विषय का उल्लेख है -

"रवी साहब को मिलते, निर्मल पाया लहेर"

संत मोरार साहब ने जब रविसाहब के सत्संग के बारे में सुना तो बड़ौदा से सुरत दर्शनार्थ आये और निर्मलदासजी के साथ मिलकर सत्संग किया । निर्मलदास जी के साथ बाबा दीन दरवेशजी का भी सत्संग हुआ । दोनों के सत्संग का उल्लेख बाबादीन द्वारा रचित "भक्त बिरदावली" की कुछ कुंडलियों में मिलता है । [2] संत नारायण स्वामी, धारो भक्त, साँई नझरूलशाह, इन्होंने

----

[1] संत निर्मलदास - [पृ० 160]

[2] संत कवि निर्मलदास - [पृ० 519]

निर्मलदास की भावधारा में बहकर अनेक साखियों की रचनायें की ।
निर्मलदासजी के धार्मिक विचारों से प्रभावित होकर अनेक लोगों के धर्म - विषयक भ्रांत धारणाओं का अवसान हुआ ।

ई0स0 1879 में इस महान पुरूष का अवसान हुआ । इनके भक्तगण, सुरत की जनता तथा अन्य लोग गहरे शोक सागर में डूब गए ।

सुरत की संत धारा में लोचन स्वामी, समर्थदास, माधवदास तथा प्यारेदास के पश्चात् पाँचवे संत पुरूष निर्मलदासजी की गणना होती है । [1] निर्मलदास एक लोक गुरू थे जनता के हृदय में इस प्रकार ओत प्रोत हो गये थे कि उनके दुःख को अपना दुःख मानकर उनकी सहायता करते थे ।

निर्मलदासजी ने धर्म विषयक उपदेशात्मक रचनायें की है । मतमतान्तर के फंद में पड़कर एक दूसरे की निंदा में सर्वथा अलिप्त रहने का उपदेश इस महान संत ने अपनी रचनाओं में दिया हैं । इन्होंने अनेक पद कुंडलियाँ, लावणी तथा साखियों की रचनायें की है । पदों में इन्होंने दोनों धर्मों की कुप्रथाओं पर चोट की है । बम्बई के गोपालदास दयाराम मास्तर ने ई0स0 1913 में इनके वाणी संग्रह से कुछ मूल्यवान वाणियों को "निर्मल भजन सागर" नाम से छपवाया । इसकी दूसरी आवृत्ति ई0स0 1963 में निकली तथा बिना मूल्य जनता में उसका वितरण किया गया । "निर्मलदास नी वाणी" नामक एक हस्तलिखित ग्रंथ दांडविल्ला के संत धाम में था वह वाणी संग्रह अभी भी अप्रगट है । इनमें से कुछ पद और साखियों को "संत निर्मलदासजी" नामक ग्रंथ में प्रकाशित किया है । कवि द्वारा रचित कुल 25 प्रकीर्ण साखियाँ उपलब्ध हुई है । [2]

----

§1§ संत कवि निर्मलदास - §पृ0 633§

§2§ संगत्ल §पृ0 114§

<u>वस्तो विश्वम्भर</u> : ‡इनका उपस्थित काल 1775 ई0‡

वस्तो का जन्म खम्भात से आधे माईल दूर "सकरपुर" नामक गाँव में हुआ था । वहाँ इनकी समाधी भी है । इनके जन्म मृत्यु का समय अज्ञात है। ई0स0 1775 में इन्होंने अपना "साखी ग्रन्थ" समाप्त किया । अतः इसे इनका उपस्थित काल माना जा सकता है ।

कहा जाता है रामानन्द सम्प्रदाय के किसी विश्वम्भर दासजी से दीक्षा ग्रहण की थी । अतः गुरु के प्रति श्रद्धाभाव से इन्होंने गुरु विश्वम्भर का नाम अपने नाम के साथ जोड़ लिया ।[1]

इनकी पद रचना अखो, अनुभवानन्द आदि के समकक्ष की मानी जाती है । प्रेम लक्षण भक्ति का प्रभाव इनके काव्य में स्थान-स्थान पर मिलता है । ब्रुम्ह स्वरूप का वर्णन इनकी काव्य की शोभा को बढ़ाता है । संतो की तथा सच्चे गुरु के वर्णन करने में वस्ता ने अपनी दक्षता का परिचय दिया है ।

वस्ता ने हिन्दी तथा गुजराती दोनों भाषाओं में रचनायें की है । वस्ता ने कुल 2643 साखियाँ लिखी हैं जिन्हें 88 अंगों में विभक्त किया गया हैं । वस्ता की हिन्दी गुजराती साखियाँ संसारिक प्रपंचों के बीच मानव को सच्चा राह दिखाती है ।

वस्ता की गुजराती रचनायें निम्नलिखित हैं :-

1‡ वस्तु गीता,	2‡ अमरपुरी गीता,	3‡ वस्तु गीता
4‡ मास,	5‡ कक्का,	6‡ तिथि
7‡ गरबी	8‡ प्रभातिया,	9‡ पद ।

---

‡1‡ गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - ‡पृ0 360‡

हिन्दी रचनायें निम्नलिखित हैं :-

1) साखी ग्रन्थ
2) गुरु गीता
3) मँगल्ल
4) चोला
5) फुटकल पद

वस्तो ने अपनी साखी ग्रंथ का आरम्भ गुरु वन्दना से किया है । विषयानुरूप विभिन्न अंगों में साखियाँ लिखते हुए कवि ने 2643 साखियाँ लिखी है । इसका उल्लेख कवि अपनी निम्नलिखित साखियों में करते हैं तथा फलश्रुति का भी उल्लेख कवि ने उसी साखी में किया है -

छब्बीस से एकतालीस साखी बोल्या सिद्ध,
अक्षरे-अक्षरे मुक्तदाता पूरणपद की विध ।

साखी ग्रन्थ ।

वस्तो की साखियों में ज्ञान के साथ-साथ रसात्मकता का अपूर्व संमिश्रण हुआ है । हठयोग की साधना की कवि ने पुष्टि की है परन्तु कवि इसे साधना की अन्तिम सीढ़ी नहीं मानता । उपनिषद के पूर्णमिदं पूर्ण मादाय" को कवि ने स्पष्ट किया है -

पूरण-पूरण के प्रेम से, पूरण पूरण की छोल,
वस्ता विश्वम्भर स्वयं भरा, एक ही झाकमझोल । 20

वस्ता की साखियाँ अप्रकाशित है हिन्दी और गुजराती में 2641 साखियाँ हैं । उपलब्ध साखियों में 100 से अधिक साखियाँ गुजराती में हैं तथा बाकी साखियाँ हिन्दी में हैं । विभिन्न अंगों के नाम निम्नलिखित रूप में हैं -

क्रमांक	अंग	साखी संख्या
1.	गुरू वन्दना	57
2.	गुरू रहेणी	53
3.	मिथ्या ज्ञानी	42
4.	माया	43
5.	चेतावनी	165
6.	आत्मज्ञान	22
7.	बंदगी	38
8.	अरस परस	44
9.	विरही जन	52
10.	विनती	34
11.	आधीनता	42
12.	संत भेद	60
13.	संत महात्मा	46
14.	उपासना	52
15.	बिनाधिकारी	46
16.	अधिकारी	33
17.	विप्रस्पर्श	46
18.	पतिव्रता	23
19.	नेह क्रमी	25
20.	शुरा	46

क्रमांक	अंग					साखी संख्या
21.	प्रेम	..	..	..	..	46
22.	अणसमय	..	..	..	..	17
23.	समझ्म को	..	..	..	..	24
24.	विचार	..	..	..	..	30
25.	विवेक	..	..	..	..	32
26.	औलखाण	..	..	..	..	34
27.	इद्रिजीत	..	..	..	..	50
28.	सुमरण	..	..	..	..	25
29.	मन	..	..	..	..	37
30.	सती	..	..	..	..	22
31.	सहेज	..	..	..	..	27
32.	साधी भूत	..	..	..	..	15
33.	निर्गुण	..	..	..	..	7
34.	निरालव	..	..	..	..	15
35.	वेहद	..	..	..	..	16
36.	अविहडे	..	..	..	..	12
37.	आप अलख	..	..	..	..	7
38.	समर्पण	..	..	..	..	10
39.	सुरत सुहागण	..	..	..	..	9
40.	समरस	..	..	..	..	19
41.	जरण	..	..	..	..	13
42.	जीवत मृतक	..	..	..	..	19
43.	दास	..	..	..	..	27
44.	रहेणी विना कथरी	..	..	..	..	21
45.	रचार्थ	..	..	..	..	22

क्रमांक	अंग		साखी संख्या
46.	परमोद	.. ..	26
47.	रहेणी	.. ..	32
48.	पहेचाण	.. ..	32
49.	गुरु शिष्य	.. ..	28
50.	वेल रमता	.. ..	26
51.	सेवक	.. ..	6
52.	विश्वास	.. ..	27
53.	कठौर	.. ..	28
54.	सूक्ष्मजन	.. ..	23
55.	समस्त	.. ..	22
56.	ध्वस्त	.. ..	24
57.	दीन	.. ..	22
58.	लघुता	.. ..	25
59.	आपको	.. ..	22
60.	जोग	... .	25
61.	साध	.. ..	22
62.	सार ग्रहण	.. ..	28
63.	हंस	.. ..	22
64.	दया	.. ..	25
65.	निंदा	.. ..	28
66.	निर्दय	.. ..	28
67.	स्वाद	.. ..	11
68.	नस्वादी	.. ..	18
69.	कसोटी	.. ..	31
70.	परखवु	.. ..	22

क्रमांक	अंग	साखी संख्या
71.	शब्द	31
72.	खमैया	24
73.	कर्म	22
74.	कुसंग	24
75.	चित्र कजरी	23
76.	असाधु	25
77.	अन्य देव	25
78.	मान	28
79.	करम	22
80.	संशय	24
81.	साकर	24
82.	नुगरा	22
83.	आहार अकल	8
84.	नाम महात्म्य	13
85.	बाबा महात्म	12
86.	वैदक	27
87.	चंदन	23
88.	भ्रम ध्वंस	22
89.	सुरती संपूर्ण	61

भक्त कवि दयाराम : ई०स० 1777 से 1853

नर्मदा के पवित्र उत्तर तट पर चाणोद नामक गाँव में भक्त कवि दयाराम का जन्म हुआ । इनके पिता का नाम प्रभूराम तथा माता का नाम राजकोर था । इनकी एक बड़ी बहन डाह्यीबाई तथा मणिशंकर नामक एक छोटा भाई भी था । इन्होंने गाँव की पाठशाला में दस वर्ष तक शिक्षा पाई तत्पश्चात् इनके पिता की मृत्यु हो जाने के कारण इनका अधिकांश समय मंदिरों साधु संगति में ही बीता । माता की मृत्यु के पश्चात् कवि डभोई अपनी मौसी के साथ रहने लगे । फिर दयाराम वाराणसी काशी गये । अधिकांश समय दयाराम तीर्थयात्रा में ही रहे । इसका उल्लेख उन्होंने अपने कविमय ग्रन्थों में किया है ।[1]

दयाराम ने अपने वसीयत पर अपने गुरू का नाम श्री वल्लभजी लिखा है । इन्होंने अपने गुरू को अधिक महत्व दिया । प्रत्येक ग्रन्थ के आरम्भ में गुरू वन्दना अवश्य की है ।[2]

दयाराम ने हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में रचनायें की है । इनके हिन्दी ग्रन्थों की संख्या लगभग 46 बताई जाती है । जिनमें से कुछ ग्रन्थों का प्रकाशन भी हो चुका है । उदाहरण स्वरूप कुछ एक ग्रन्थों के नाम हैं -

(1) सतसई, (2) वस्तुवृंद दीपिका, (3) वृंदावन विलास
(4) रसिक रंजन, (5) श्री अक्ल चरित्र चंद्रिका (6) चातुर चित्त विलास
(7) क्लेश कुठार, (8) भगवतानुक्रमणिका, (9) व्रज विलासामृत
(10) सम्प्रदाय सार आदि ग्रन्थ है ।

---

(1) दयाराम और उनकी हिन्दी कविता - (पृ० 34)
(2) दयाराम और उनकी हिन्दी कविता - (पृ० 35)

भक्त कवि दयाराम की स्वभाषा गुजराती में रचित रागबद्ध ग्रन्थों की संख्या 60 के आस-पास है । इनकी गुजराती छंदोबद्ध ग्रन्थों की संख्या 13 हैं । इनकी गुजरातीमय ग्रन्थों की संख्या तीन हैं ।[1]

दयाराम के "रसथाल" नामक ग्रंथ में साखी-दूहाकृति ब्रजभाषा में लिखी हैं । "साखी", दूहा सम्पूर्ण एक स्वतंत्र ग्रन्थ है । इस ग्रन्थ में कवि ने भगवद गीता के सारतत्वों को आधार बनाकर साखियों में इनका निहित किया है । इनकी साखियाँ समाजोपयोगी तथा भक्ति भाव से परिपूर्ण हैं । कृष्णभक्ति से सरोबर इनकी साखियाँ, कृष्ण के अनन्य रूप, संतों का स्वरूप, निर्गुण-सगुण दोनों भावों में बहकर कवि ने साखियाँ लिखी है । ब्रजभाषा प्रधान है परन्तु कहीं कहीं गुजराती का असर दृष्टि गोचर होता हैं ।

इस ग्रन्थ में 245 साखियाँ ब्रजभाषा में है यह साखियाँ प्रकाशित हैं । कवि ने साखी - दूहा ग्रंथात में स्वनिवास स्थान ग्रंथ का नामकरण, रचना काल, रचना स्थान, विषय निरूपण, फलश्रुति आदि का मिताक्षरी संकेत निम्नलिखित रूप में किया है -

उत्तम गुर्जर देश मधि, श्री नर्मदा पुलीन
श्री शेषशाई प्रभू वहाँ, कवि निवास वाहाँकीन 240

श्री गुरू वल्लभ लाल, श्री गिरिधर प्रबल प्रताप,
पून ग्रन्थ करवाय, निजदास हर्यो जु त्रिताप
- रसथाल - 241

ग्राम नाम चंडीपूरी, हरि जनको मूल धाम
वास वस्पो ब्रज देश में, दयाराम अस नाम 242

---

[1] दयाराम भाई नुं जीवन दर्पण - [पृ0 11, 12, 13, 14]

वैष्णों वल्लभी साठो देश, सब हरिजन को दास,
साखी दुहा अस नाम धर्यो, श्रीकृष्ण मिलन की आस ।। 243

निर्दोष पृथा विचार है, कविजन गुनि गिनियेन,
कृष्ण संबंधी अलाप सत्रु दूषण देत वनेन ।। 244

श्रीमद वल्लभकी कृष्ण, पा दुहा यह कवि,
न्यूनाधिक कछु होय सो शुद्धहि करी प्रवीन ।। 245 {पृ0 257

दयाराम पर गुजरात के कई विद्वानों ने शोध कार्य किया और करवाया है । परन्तु किसी का ध्यान दयाराम की प्रस्तुत कृति की ओर नहीं गया । किसी ने ग्रन्थ का अल्प परिचय तक नहीं दिया है । यहाँ प्रथम बार इस ग्रन्थ को आधार बनाकर लेखन कार्य किया गया है । यह मेरी निजी देन है ।

दयाराम मूलतः एक भक्त कवि थे । अतः उन्होंने प्रायः सांसारिक सुखों की असारता, सदाचार, परोपकार आदि को अपनी रचना का आधार बनाया । दयाराम का चिन्तनात्मक साहित्य हमारे हृदय में किसी प्रकार की रागात्मक संवेदना पैदा करके हमारी भावधारा को उद्बुद्ध नहीं करता अपितु वह बौद्धिक धरातल पर शास्त्रीय तर्क-वितर्क द्वारा उनकी साखियों की समीक्षा प्रस्तुत करता है । उनकी साखियाँ अनुभव की नवीनता की दृष्टि से तो महत्वपूर्ण है ही, काव्योत्कर्ष की दृष्टि से भी बड़े मूल्यवान हैं ।

गिरधर : ई० 1787 - ई० 1846

गिरधर का जन्म बड़ौदा जिले के मातर गाँव में हुआ था । इनके पिता गरबउदास गाँव के तलाटी थे । जाति से दशा लाड़ वणिक वैश्य । गिरधर ने एक सच्चे वैष्णव भक्त के रूप में अपना जीवन व्यतीत किया । अल्प आयु में गिरधर अनाथ हो गए और इनका वैवाहिक जीवन सुखी न होने के कारण इनके मन में वैराग्य का भाव उत्पन्न हुआ । अतः संसार से विरक्त होकर गिरधर हरिभजन में मस्त हो रहते ।

गिरधर ने वल्लभ-विजय नामक विप्र के पास संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन किया और काशी के वैष्णव गोस्वामी श्री पुरूषोत्तम जी के सम्पर्क में पिंगल शास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया । इन्हीं के सत्संग से गिरधर वैष्णवी संस्कारों से प्रेरित हो भक्ति मार्ग पर चले और कृष्णभक्ति के पद रचने लगें ।[1]

यात्रा के दौरान श्रीनाथजी बाबा के दर्शन को न जा सकने के कारण गिरधर आहत हुए और यात्रा कार्य में ही इनका देहान्त हो गया ।

प्रेमानंद और दयाराम जैसे कृष्णभक्तों की रचनाओं से प्रेरित होकर गिरधर ने अनेक पद, भजन और साखियों की रचनायें की हैं । इनका प्रधान उद्देश्य राधा कृष्ण का लीला गान करना था ।

---

1 राधा-कृष्ण भक्त कोश - संपादक भगवती प्रसाद सिंह, गोरखपुर प्रकाशक श्रीकृष्ण जन्म स्थान सेवा संस्थान मथुरा 1876 पृ० 433

इन्होंने रामायण, राजसूय यज्ञ, अश्वमेध, गोकुल-लीला, मथुरा - लीला, राजा विरहना बारहमास, तुलसी विवाह, द्वारका लीला, श्रृंगार भक्ति के गरबी और अन्य पद रचे हैं । भागवत पर आधारित "गोकुल लीला" और "द्वारका लीला" में कवि ने भागवत के श्लोकों का सुन्दर अनुवाद किया है ।

गिरधर ने हिन्दी (ब्रज) और गुजराती दोनों भाषाओं में रचना की हैं । इन्होंने 11 ग्रन्थ लिखे हैं जिनमें 6 हिन्दी में हैं । "दाणलीला" अप्रकाशित हिन्दी काव्य है । इसके अन्तर्गत राधा और कृष्ण के बीच में वाद-विवाद का वर्णन है ।[1]

इनके द्वारा रचित शुद्ध ब्रजभाषा में 50 के आस पास साखियाँ उपलब्ध हैं । ये सभी अप्रकाशित हैं जिनमें कवि ने राधा कृष्ण विषयक विभिन्न लिलाओं के वर्णन के साथ-साथ उपदेश भी दिए हैं ।

---

(1) गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य को देन -
- डॉ0 नटवरलाल व्यास (पृ0 86)

<u>देवा साहब</u> : ई०स० 1794 से 1844 के आसपास

देवा साहब का नाम कच्छ के प्रमुख संतों में लिया जाता है । देवा साहब के जन्म, जीवन एवं मृत्यु के सम्बन्ध में व्यवस्थित जानकारी नहीं मिलती । अन्तसाक्ष्य और बहिसाक्ष्य में भी उनकी जीवनी का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है । उनकी रचनाएँ ही उनका परिचयपत्र है । ये जाति के क्षत्रिय तथा हमला गाँव कच्छ के निवासी थे ।[1] कहा जाता है कि किसी "हरसूट" नामक संन्यासी से प्रभावित होकर उनसे गुरुमंत्र लिया ।[2]

देवा साहब के जीवन में अनेक अलौकिक घटनायें घटी । उन्हें स्वप्नादेश मिलने के कारण कुछ द्वारका यात्रियों के साथ जाने की इच्छा प्रकट की । इनके पिता ने इनका विरोध किया और ताले में बन्द कर दिया परन्तु ईश्वर की कृपा से बन्द दरवाजे से बाहर निकल कर यात्रियों की टोली में शामिल हो गए । गृहस्थाश्रम में भी उनका मन नहीं लगा तथा कुछ समय पश्चात् उन्होंने संन्यास ले लिया ।[3]

देवा साहब में रचना की प्रबलता प्रखर थी । लेखन कला का अजस्र स्त्रोत इनके हृदय में फूट पड़ा और धार्मिक भाव से ओतप्रोत अनेक महान ग्रन्थों की रचनायें इन्होंने की । इनके पद अनेक राग-रागिनियों में निबद्ध हैं जिनमें भक्ति, ज्ञान व कर्म तीन विषय मुख्य हैं ।

देवा साहब रचित समस्त वाणी का संकलन सम्भवतः उनके शिष्य रामसंग द्वारा जो अपने समय के अच्छे कवि, चिन्तक और संत थे, तीन ग्रन्थों में किया है ।

----

(1) कच्छ ना संतों - दुलेराम काराणी - (पृ० 84)

(2) कच्छी संतों की हिन्दी वाणी (पृ० 58)

(3) कच्छी संतों की हिन्दी वाणी (पृ० 58)

।1। रामसागर -

इसमें निर्गुण ब्रम्ह की साधना का निरूपण है । इसे ज्ञान काण्ड भी कहा गया है । ज्ञानमार्गी परम्परा का उत्स वेदों से मिल जाता है । इसका श्रोत्त उपनिषद, बौद्ध और जैन धार्मिक विश्वासों, तान्त्रिक मार्ग, नाथ सम्प्रदाय, वैष्णव सहिजता सम्प्रदाय, सूफी साधना से होता हुआ आज तक अस्खलित प्रवाहमान है ।[1] कवि ने इस ग्रन्थ का आरम्भ इस प्रकार किया -

श्री परमात्मनेन नम: ।। श्री गुरूभ्योनम:
श्री गणेशायनम: ।। अथ साखी लिक्ष्यते ।

पूरा ग्रन्थ विभिन्न अंगों में लिखा है जैसे - श्री दरसणनो अंग, अथ अदर्शन अंग, अथ परमार्थ का अंग, अथ भक्ति अंग की साखी, अथ सैवा अंग आदि विभिन्न अंगों में विभाजित है । इन अंगो में दोहरा और सोरठा का प्रयोग मिलता है । यही देवा साहब की साखी ग्रन्थ की विशेषता है । इससे निष्कर्ष निकलता है कि कवि ने साखी, दोहा, सोरठा को भिन्न न मानकर एक समान माना है । कवि ने इन तीनों शब्दों का पर्याय के रूप में प्रयोग किया प्रतीत होता है ।

देवा साहब ने अपने ग्रन्थ के समापण में फलश्रुति के प्रति निर्देश करते हुए कहा है कि -

साखी ईंह जो माखी है ।।
सुने सुनावे जेह
सो जननी की उदर में ।। फिरी धरे नहीं देह ।।

।1। कच्छी संतों की हिन्दी वाणी - ।पृ0 6।।

§2§ हरिसागर -

इसमें सगुण भक्ति को महत्व दिया गया है। नवधा भक्ति का सांगोपांग वर्णन है। उपासना काण्ड पर लिखा गया यह अद्वितीय ग्रन्थ है।

§3§ कृष्णसागर -

इसमें उपासना और ज्ञान मार्गी चिन्तन पर कुछ रचनायें हैं परन्तु सर्वत्र उपासना एवं भगवद लीला का चित्रण मिलता है। इसे "कर्मकाण्ड" नाम से सम्बोधित किया गया है।

देवा साहब की वाणी का तीन चौथाई भाग हिन्दी में है और एक चौथाई गुजराती में है। कलियुग में जीव धर्माचरण करें और अधर्माचरण से बचें इस हेतु से तीन ग्रन्थ रचे हैं।

देवा साहब ने साखियों को विषयवस्तु के आधार पर विभिन्न अंगों में विभाजित किया है। जैसे ज्ञान को अंग, अस्तुति जोग आदि। देवा साहब ने कुंडलियाँ, दोहा, सोरठा, चौपाई, पद्धरि, छप्पय, कवित्त, झूलणा आदि मात्रिक छन्दों का प्रयोग अपनी वाणी में किया है।

देवा साहब द्वारा रचित रामसागर में साखियाँ विभिन्न अंगों में विभाजित है ।

1	दरसणनों अंग	... ...	35
2	अथ अदर्शन अंग	... ...	31
3	अथ परमारथ को अंग	... ...	14
4	अथ अन्वयपरमार्थ अंग	... ...	20
5	अथ गुरू कृपा अंग	... ...	18
6	अथ गुरू अंग लिख्यते	... ...	8
7	अथ समदृष्टि को अंग संत लछन	... ...	39
8	अथ कुसंगीन को अंग	... ...	7
9	अथ अस्तुति जोग	... ...	18
10	अथ भक्ति अंग साखी	... ...	17
11	अथ अध्यात्म अंग की साखी	... ...	24
12	अथ साधु स्तुति	... ...	14
13	अथ नाम बत्रीसी	... ...	36
14	अथ वैराग्य अंग लिख्यते	... ...	34
15	अथ हरिभजन को अंग साखी	... ...	14
16	अथ परिधा अंग	... ...	15
17	अथ सेवा अंग लिख्यते	... ...	17
18	अथ निंदा अंग	... ...	11
19	अथ माया अंग	... ...	40
20	अथ शिष्य अंग लिख्यते	... ...	8

इनके द्वारा रचित 415 के आस-पास ब्रजभाषा की साखियाँ उपलब्ध हैं । ये सभी साखियाँ प्रकाशित हैं ।

हरजीवनदास : ﴾ई0स0 1804 के आसपास﴿

उत्तर गुजरात के भ्रमणशील वनजारे जो कि गुजरात, कच्छ और काठियावाड़ आदि प्रदेशों में भ्रमण करते थे, उनकी टोली ने एक बार सदगुरू खीम साहब की वाणी का श्रवण किया । सदगुरू खीम साहब कच्छ के रापर गाँव में उपदेश दे रहे थे । उन बंजारों पर खीम साहब की वाणी का प्रभाव पडा और उन लोगों ने बड़े उत्साह के साथ खीम साहब के उपदेश का पालन करने की इच्छा प्रकट की तथा गुरूवाणी को फिर से श्रवण करने की इच्छा लेकर वनजारे चले गये । खीम साहब एक पहुँचे हुए संत थे उन्होंने संसार के प्रपंच की व्याख्या इस प्रकार की जिससे कि प्रपंच में लिप्त व्यक्ति की चेतनाशक्ति जागृत हो जाय तथा उसे सदबुद्धि आ जाय ।[1]

यही वनजारे जब गाँव लौटकर गुरू दर्शन हेतु खीम साहब के पास गए तब उन्हें खीम साहब की समाधि दिखाई दी । हरजीवनदासजी की गुरू भक्ति प्रबल थी । उन्हें गुरू के उपदेश की तथा मार्गदर्शन की आवश्यकता थी । खीम साहब की समाधि का दर्शन करके उन्हें बड़ी निराशा हुई । गुरू भक्ति उनकी इतनी प्रबल थी कि उन्होंने गुरू के बिना जीवित रहना श्रेयकर नहीं लगा अत: उन्होंने भी अपने प्राणों का त्याग करना ही उचित समझा तथा अपने प्राणों का त्याग करके सदगुरू के देश में चले गए । इनका समय ई0स0 1804 के आसपास है ।

इनकी रचनाएँ शुद्ध ब्रजभाषा में है परन्तु कहीं कही गुजराती भाषा का प्रभाव दिखाई पड़ता है । जाति से वनजारे होने पर भी इनकी भाषा में जो

﴾1﴿ माणेकलाल राणा से प्राप्त हस्तप्रत से

सरल भाषागत प्रभाव परिलक्षित होता है वही इनकी विशेषता है ।[1] गूढ़ से गूढ़ बातों को सरलता से लोगों तक पहुँचाना ही इनकी रचनाओं की विशिष्टता प्रदान करती है । इनकी रचनाओं का मुख्य विषय गुरू की महिमा का गान है । इनकी साखियाँ सद्गुरू की महत्ता का प्रतिपादन करती है । अत: गुरू ही सभी संसारिक प्रपंचों से उद्धार करनेवाला है । यही शिक्षा हरजीवनदासजी की साखियों से मिलती है । इनके द्वारा रचित विपुल साखियाँ हमें सांसारिकता के बन्धनों से मुक्त भगवद् भजन में लिप्त रहने की महत् शिक्षा देती हैं ।

ब्रजभाषा में रचित इनकी 20 प्रकीर्ण साखियाँ उपलब्ध हैं । इनकी साखियाँ अप्रकाशित है ।

---

§1§ माणेकलाल राणा से प्राप्त हस्तप्रत से

<u>छोटम</u> : ﴾ई०स० 1812 से ई०स० 1885 तक﴿

छोटम का जन्म पेटलाद तालुका के मलातज गाँव के साठेदरा नागर परिवार में हुआ । इनके पिता का नाम कालिदास था । छोटम बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के थे । सत्संग और भगवत् भजन में मग्न रहने के कारण इन्होंने नर्मदा-तट के निवासी पुरुषोत्तम योगी से दीक्षा ली और बैरागी हो गये । छोटय संतराम और कुबेरदास के समकालिन थे । छोटम ने अनेक ग्रन्थों की रचना की है । कहा जाता है कुबेरदास के ग्रन्थों की लिपि करते-करते छोटम एक महान रचनाकार बन गये । इनकी रचनाओं की लम्बी सूची है । इन्होंने हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में रचनायें की है ।

इनकी गुजराती रचनाओं की संख्या 40 से भी अधिक है । इनकी अधिकांश रचनायें आख्यान शैली की है । अत: छोटम पर आख्यान परम्परा का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है । पुरुषोत्तम योगी नुं आख्यान, नरसिंह - कुंवर नुं आख्यान, मदालसा अलर्क आख्यान आदि महत्वपूर्ण गुजराती रचनायें हैं ।[1]

हिन्दी में छोटम की साखियाँ पद, भजन, कीर्तन, लावणी प्रसिद्ध है । कवि के अन्तिम दिनों में लिखे गये "बोध-सुधा" नामक एक बृहत् हिन्दी ग्रन्थ का भी पता चला है । इनकी प्रतिलिपि हरप्रसाद शास्त्री के पास है । ~~इनकी~~ परन्तु ग्रन्थअनुपलब्ध है । "भक्ति धर्म महिमा" नामक हिन्दी ग्रन्थ भी है । छोटम की साखियाँ कबीर और अखा की साखियों का स्मरण कराती है और चाबुक की तरह चोटदार है । दुर्जनों से दूर, महात्मा और संतों की भक्ति, सज्जन की गुणवत्ता, गुणीजनों का आदर जीव में शीव में परिणत होना, चेतावनी आदि को अपनी साखियों का विषय बनाया है । कवि व्यवहार ज्ञान तथा सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का परिचय हमें इनकी साखियों से मिलता है ।

﴾1﴿ हिन्दी साहित्य को गुजरात के सन्त कवियों की देन - ﴾पृ० 198﴿

छोटम ने साखियों की रचना अंगों में की है इनकी साखियों में हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं का प्रयोग विपुलता से हुआ है ।

क्रमांक	अंग				साखियों की संख्या
1	कपटी को अंग	...	...	...	31
2	दुरजिन को अंग	...	...	...	40
3	सज्जन को अंग	...	...	...	40
4	आदर को अंग	...	...	...	40
5	आतुरता को अंग	...	...	...	23
6	जीव को अंग - दोहा	...	...	...	20
7	माया को अंग - दोहा	...	...	...	25
8	विविध विषय को अंग - दोहा	...	...	...	5
9	स्वाभिमान को अंग - दोहा	...	...	...	7
10	आत्मसार को अंग - दोहा	...	...	...	28

छोटम द्वारा रचित 262 के करीब साखियाँ उपलब्ध है । इनमें से 200 के करीब साखियाँ हिन्दी में हैं और 51 के आस-पास साखियाँ गुजराती में है । ये सभी साखियाँ प्रकाशित हैं ।

[illegible] "भक्ति धर्म महिमा" नामक एक "बृहद् हिन्दी ग्रन्थ" मिलता है जो छोटम रचित है । छोटम की शैली सरल और प्रभावोत्पादक है । इनकी साखियों में गुजराती, ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली का प्रभाव स्पष्ट है ।

संत कंवलदास : (18 के आगे पाठ)

सूरत में निर्वाण साहब के गद्दी पर नये महंत राधोदासजी के शिष्य कंवलदासजी थे। एक रात को वे देव वाणी सुनकर जाग गये देखा तो मंदिर में भगवान उनको पुकार रहे थे। "बेटा कंवल जितनी जल्दी हो सके हमारी प्रतिमा उठाकर यहाँ से भाग जा।" प्रभु की कृपा से स्वर्ण प्रतिमा लेकर कंवल भाग गये। ब्रज में जाकर वहाँ एक ब्रजमोहन का टूटाफूटा मंदिर मिला और उस प्रतिमा के अन्दर से मूल्यवान हीरे मिलें उन हीरों से मंदिर का पुनः निर्माण किया। परन्तु वर्षों के बाद जब गुरू आश्रम में वापस आये, तब उन्हें प्रतिमा चोर, मुर्ति चोर कहकर साधु लोग उनकी निन्दा करने लगे। परन्तु इनकी भक्ति को देखकर राधोदासजी के बाद वे महन्त पद पर नियुक्त किए गए। एक महान साधु पुरूष संसार में निंदा के पात्र बने।

अनुमानतः इनका जन्म आज से डेढ़ सौ साल पहले का है।[1]

इनकी रचनाओं की भाषा ब्रज हैं अध्यात्म भाव से पूर्ण इनकी साखियाँ इनकी भगवत भक्ति को प्रदर्शित करती हैं। इनकी अपमानित जीवन की व्यथा तथा अज्ञानी दुनिया किस प्रकार साधु और चोर के भेद को समझने में असमर्थ है इसी भाव को प्रधानता देती है।

ब्रज भाषा में रचित इनकी 20 प्रकिर्ण साखियाँ उपलब्ध हैं। इनकी साखियाँ अप्रकाशित हैं।

---

[1] माणेकलाल राणा से उपलब्ध हस्तप्रत से

46

संतराम महाराज : (ई०स० 1821 में समाधि)

संतराम को संत परम्परा में "अवधूत" कहा जाता है । इनका आदि निवास गिरनार पर्वत था । ये परिब्राजक संत थे । सूरत, बड़ौदा, पादरा, उमरेठ, खम्भात आदि स्थानों से 1872 में संतराम नड़ियाद आये थे ।[1] नड़ियाद के डुंगाकुई वाले खेत में गाँव से दूर एकान्त में धूनी रमायी । प्रारम्भ में ये खिन्नी के वृक्ष के पोले तने में ध्यान मग्न बैठे रहते थे । धीरे-धीरे जनता में इनकी प्रसिद्धि बढ़ने पर भक्तों की संख्या में वृद्धि होने के कारण संतराम अन्यत्र जाने की सोचने लगे । परन्तु पूंजाभाई नामक भक्त के अनुरोध पर रूक गये । उन्होंने ई०स० 1821 में वहीं समाधि ली ।[2]

संतराम नड़ियाद में रहकर वहाँ के लोगों को ज्ञान, योग, भक्ति और प्रेम का उपदेश देकर ब्रम्ह जिज्ञासा से मुक्त किया ।

महाराज के भक्तों में लक्ष्मणदास, हरिराम, जेठा भगत, पुरूषोत्तम, विष्णुदास, प्रीतम, ईश्वरदास, रणछोड़दास, बालकदास, राघव मुनि, विठ्ठलदास मुगटराम आदि हैं । इनके शिष्य भी रचयिता थे । अत: उन्होंने भी पद, भजन आदि की रचनायें की । इनके अनेक शिष्यों ने महाराज के जीवन-चरित्र को सुन्दर ढंग से पदों में रचा है । गुरू के वचन और उपदेशों को लिपिबद्ध करके उसका प्रचार-प्रसार भी सारे गुजरात में किया । कुछ भक्तों ने स्त्रीभाव से महाराज की भक्ति की ।

----

(1) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी (पृ० 254)

(2) हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन - (पृ० 195)

+7

इस पंथ के अनुयायी आपस में मिलते हैं तो "जै महाराज" कह कर एक दूसरे का स्वागत करते हैं । अनेक स्त्री भक्तों ने अपने पदों में साम्प्रदायिक अभिवादन "जै महाराज" का प्रयोग किया है ।

संतराम ने हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में रचनायें की है । इनके पदों में हिन्दी के साथ-साथ गुजराती का भी मिश्रण है । बावनी लिखने की परम्परा का अनुसरण करके संतराम ने "गुरू बावनी" लिखकर एक अमरकृति की रचना की है । इसमें अध्यात्म भाव से ओत-प्रोत गुरू, ब्रम्ह, भक्त, संत, मन आदि का विशेष उल्लेख है ।

गुरू बावनी के अन्तर्गत 52 साखियाँ उपलब्ध हैं जो संत टकसाली भाषा में हैं और प्रकाशित हैं ।

इनकी प्रकीर्ण वाणी में रवेणी, कफी रेखता, गजल, लावनी, आरती, थाल, गरबी, मंगल कुंडलिया, झूलना आदि का समावेश होता है । अखा-प्रणालिका के संतों की भाँति इन्होंने भी "काफर बोध" तथा भारतीय संतों की भक्तमाल लिखने की परम्परा का अनुसरण कर पूरबी बोली में एक लघु भक्तमाल की रचना की है ।

वस्तो की भाँति महात्मा राम ने भी अखा द्वारा प्रयुक्त शब्दों का प्रयोग किया है -

"ज्ञान गंगागुरू घाट मां, नहाय भये नैहकाम"

रोम रोम नख शीखें, लखे अखे पद आध्य"

उपरोक्त उदाहरणों से उन पर अखा का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है ।

8

संत महात्यमराम : ई0स0 1826 से ई0स0 1889 तक

महात्यमराम का जन्म ई0स0 1826 को तथा अवसान ई0 1889 को हुआ था । ये सीमटड़ा गाँव के निवासी थे । इनके पिता का नाम हमीर तथा माता का नाम गलबाई था ।

इन्होंने अपने पदों में गुरू रूप में आदित्यराम का वर्णन किया है । आदिराम के गुरू देवाराम का भी वर्णन मिलता है जो महीनदी तटस्थ मुजपुर ता0 पादरा में रहते थे ।[1]

महात्यमराम के शिष्यों में हरिदास और नरभेराम प्रमुख है । इन दोनों भक्तों ने गुरू के नाम से विभिन्न स्थानों में गद्दियाँ स्थापित की तथा गुरू के वचनों का प्रचार प्रसार किया । महात्यमराम की गुरू शिष्य परम्परा की तालिका इस प्रकार है - देवराम - आदितराम - महात्यमराम - नरभेराम - निरमलराम - शालिगराम - परागराम - लायकराम - नौकाराम ।

इनकी वेशभूषा देखकर इनको राम कबीर सम्प्रदाय के अन्तर्गत का संत माना जा सकता है ।

इन्होंने अपने शिष्यों के साथ गुजरात के चरोतर, वाकल, कानम आदि स्थानों में अपने उपदेश प्रचार हेतु गमन किया ।

इनकी रचनाओं में छोटी चिन्तामणि, बड़ी चिन्तामणि, शब्द बाण सुधा - सिन्धु, भक्त महिमावली, कक्का, मास तिथि, विभिन्न अंगों में विभक्त

----

1 गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - पृ0 401

साखियाँ, अखंड प्रकाश, भक्त नामावलि विशेष उल्लेखनीय है । इनकी प्रकीर्ण वाणी में रवेणी, काफी रेखता, गजल, लावणी, गरबी, कुंडलियाँ, झूलना आदि का समावेश होता है । "काफर बोध" तथा भक्त माल लिखने की परम्परा का अनुसरण करके पूर्वी बोली में एक लघु भक्तमाल की रचना की है ।

इनकी भाषा पर उर्दू, अरबी, चरोतरी गुजराती, हिन्दी का असर है ।

इनके द्वारा रचित 30 के आस पास साखियाँ उपलब्ध हैं । कुछ प्रकीर्ण हैं और कुछ अंगों में हैं ।

क्रमांक	अंगों के नाम		साखियों की संख्या
1	आत्मज्ञान को अंग	... ...	8
2	सरबंध साखी	... ...	11

इनकी साखियाँ प्रकाशित है ।

अर्जुन : ‡ई०स० 1850 से ई०स० 1920 तक‡

अंकलेश्वर तालुका के थड़खोल गाँव के निवासी अरजुन भगत का जन्म 1850 ई० में हुआ था । ये कोली जाति के थे । अनपढ़ होने के कारण इनके प्रारम्भिक जीवन में ज्ञान का अभाव पाया जाता है । श्रद्धा एवं भक्ति के आधार पर ही ये ईश्वर का भजन मनन करते रहे । अन्तत: निरांत महाराज के एक शिष्य "रणछोड़" से दिक्षा ग्रहण करके ज्ञान के सोपानों को पार कर गये ।

इनकी विभिन्न रचनायें दोहा, चौपाई, कुंडलियाँ, मनहर, झूलणा आदि छंदों में उपलब्ध होती है । इनके पद, खोज, विरह, अनुभव, बोध आदि खंडों में विभाजित है । इनके पदों में इनकी ज्ञानानुभूति का परिचय मिलता है । ईश्वर के प्रति अटल विश्वास तथा ईश्वर प्राप्ति के साधनों का वर्णन इनकी पदों में मिलता है ।

इन्होंने हिन्दी गुजराती दोनों भाषाओं में रचनायें की है । इनकी साखियाँ शिक्षाप्रद और सामाजिक चेतावनी से पूर्ण है । इन्होंने सरल भाषा में साखियाँ लिखी है ।

इनकी साखियाँ अंगों में न होकर प्रकीर्ण हैं । स्वानुभावी और सामाजिकता को ध्यान में रखकर अर्जुन ने साखियाँ रची हैं ।

अर्जुन द्वारा रचित 60 साखियाँ उपलब्ध हैं, जिनमें करीब 50 साखियाँ हिन्दी में है और 90 के करीब साखियाँ गुजराती में हैं । इनकी सभी साखियाँ प्रकाशित है ।